मानव मन्दिर

11/1987

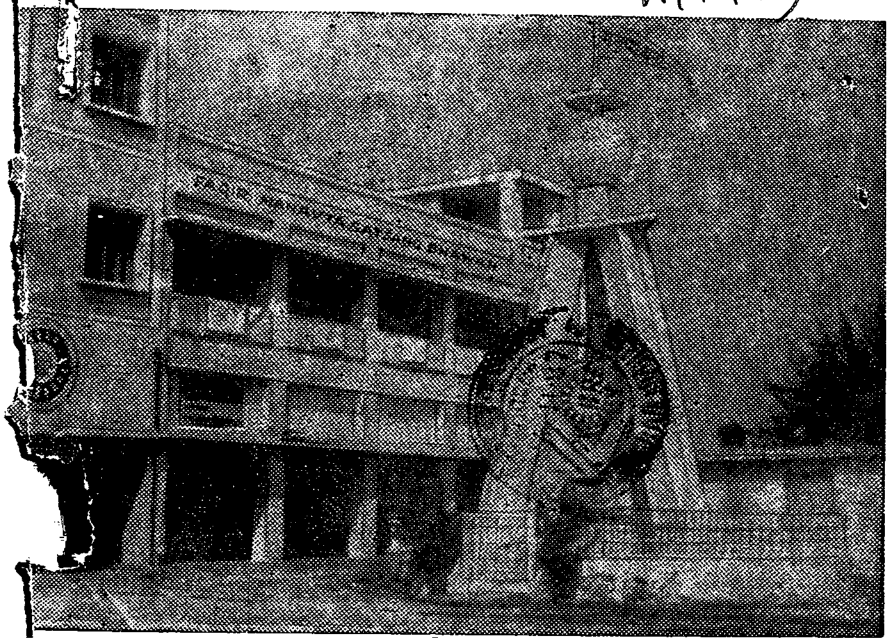

FORM I

(See Rule 8)

Place of Publication	Hoshiarpur
Date of Publication	10th of every month
Periodicity of Publication	Monthly
Printer's Name	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir. Hoshiarpur
Editor's Name	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir, Sutehri Road, Hoshiarpur.
Name and address of individuals, who own the Manav Mandir of partners of shareholders, holding more than one Percent of the total capital	Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur.

I, Dr. Paras Ram Aggarwal hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Dated :

Signature of Publisher

Printed and Published by : Dr. Paras Ram at Shiv Dev Rao Press. Manavta Mandir Hoshirapur. for the Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur.

मानवता मन्दिर में अगला मासिक सत्संग
29-11-87 को होगा।

नोट :— पृष्ठ 71 पर यह सूचना शामिल करें 12-12-87 को हजूर मानव दयाल जी महाराज मद्रास G. T. एक्सप्रेस से चलकर (वाया काजीपेट) दिल्ली के लिए रवाना होंगे ।

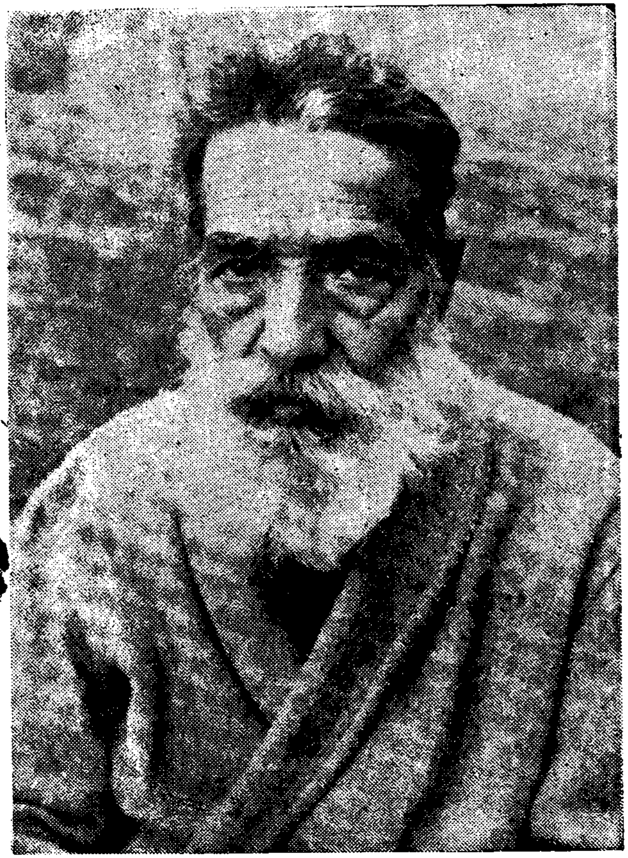

Param Sant Param Dayal Faqir Chand ji Maharaj

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

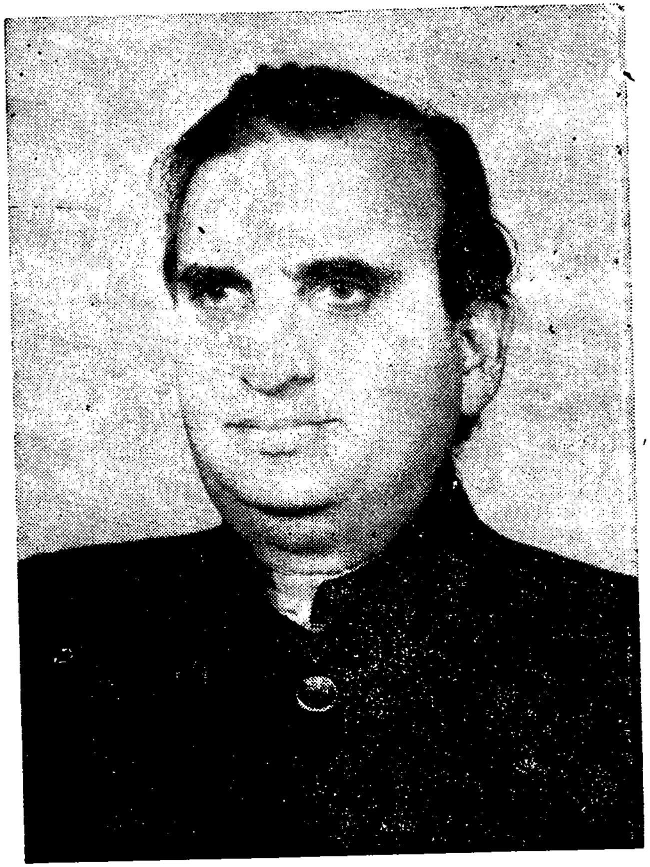

Param Sant Manav Dayal Dr. I. C. Sharma ji Maharaj

मासिक—

मानव मन्दिर

विश्व में मानव मात्र के सामाजिक सांस्कृतिक
और आध्यात्मिक कल्याण और विकास की
सेवा में संलग्न मासिक पत्र।

BE MAN

मनुष्य बनो

सम्पादक :
डा० परस राम अग्रवाल

वर्ष 14	मंगलवार 10 नवम्बर 1987	संख्या 7

सत्संग हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज

(गतांक अक्टूबर 87 पृष्ठ 6 से आगे)

पार्वती "इसके बाद क्या करना होता है?"

शिव "आज्ञाचक्र तक कुक्कुटासन जरूरी है। अब अगर योगी चाहे तो अपने आसन को बदल सकता है। सिद्धासन पर बैठे, वीरासन पर बैठे पद्मासन पर बैठे। जिसमें उसे किसी प्रकार की कठिनाई महसूस न हो वही आसन अख्तियार करे। अगर वह चाहे तो कुक्कुटासन ही को जारी रखे। आज्ञाचक्र के ऊपर सहस्रार चक्र आता है। जब रुद्र नेत्र, शिव नेत्र, रुद्र अक्ष या शिव अक्ष पर चित्त की वृत्तियाँ जमने लगें तो वह कुदरती तौर पर ऊपर चढ़ने लग जायेंगी। ऊपर तीसरे तिल से मिला हुआ सहस्रार चक्र का मण्डल है, यह विराट् का रूप है। योगी इसका दर्शन करे। इस के आगे ओंकार का स्थान है। वह मानसिक है पर ब्रह्माण्ड में ब्रह्मा का कारण-रूप है। वह स्थूल और सूक्ष्म के परे है। यहाँ तक ब्रह्मगति है। इन तीनों देशों से परे सन्तों का चौथा देश आता है जिसे सतखण्ड या सचखण्ड बोलते हैं। यह भँवरगुफा से शुरू होकर सतलोक तक चला जाता है। मुकामात के बदलने में कोई दिक्कत नहीं होती। जब एक मुकाम पर चित्त एकाग्र या यकसू हुआ फिर उसे एक जगह से हटाकर दूसरी

जगह लगा दिया इस मुकाम पर अबूर (पार) पा जाने पर उसे आगे के मुकाम पर लगा दिया। योग की क्रिया बस इतनी ही है, इसमें क्या दिक्कत है। ऐ पार्वती ! ईश्वर का पाना निहायत आसान है इधर से उठाया या उधर रखा और उधर से उठाया इधर रखा बस इतना ही करना है इस-लिए मैं कहता हूँ कि योग का साधन बिलकुल आसान है।

पार्वती "आपने अब तक सिर्फ यम, नियम और आसन योग की तीन क्रियाओं पर प्रकाश डाला है। अभी अष्टाङ्ग यौग की पाँच क्रियाएँ बाकी हैं इन्हें समझा दीजिये।"

शिव "जो पाँच क्रियाएँ बाकी रह गई हैं इनके नाम प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि हैं।

"प्राण का इस तरह चलते रहना कि इनमें कमी-वेशी या तेजी और सुस्ती न आने पर प्राणायाम कहलाता है। जब कोई आदमी दौड़ता है तो उस की साँस तेजा से चलने लग जाती है या जब कोई आदमी मोह के जेर-असर आ जाता है तो उसके प्राण की रफ्तार सुस्त पड़ जाती है ये दोनों ही खराबियाँ हैं। आसन की बाकायदगी से प्राण अजखुद (अपने आप में) बाकायदा चलते रहते हैं। इनका रेचक, पूरक और कुम्भक आप ही आप ठीक हो जाता है, यह आसान तरीका है। योग का मकसद (मतलब) यह हरगिज नहीं है कि कानून कुदरत के खिलाफ कशमकश करते हुए एक नथुने से साँस को खूब खींचा जाय फिर उसे अन्दर रोक जाय और बाद में दूसरे नथुने

से निकाला जाय। कुदरती रेचक, पूरक और कुम्भक है वो जिसमें खींच-तान न हो। यह आसान है जब जद्दो-जहद और खींच-तान से काम लिया गया तो प्रत्याहार में जाकर नुक्स पड़ेगा। मकसद तो समता के धारण करने से है आसन कर लेने से रेचक, पूरक और कुम्भक में समता आ जाती है और यही समता प्रत्याहार में महावन (इकट्ठी) होती है।"

प्रत्याहार कहते हैं उल्टा आहार करने को। इसकी तरकीब यह है कि भ्रू-मध्य में अपने चित्त को जमा दें, नीचे की सारी वृत्तियों को खींचकर इसके ऊपर ठहरावें। मन अगर बहकता है तो इसे बार-२ खींचकर इसी जगह लगायें। कुछ दिनों इस तरह मशाकी (कसरत) करने से मन आप ही आप वहाँ ठहर जायेगा।"

"इस मन के टिकाव, ठहराव को धारणा बोलते हैं। धारणा कहते हैं किसी चीज के पकड़ रखने को। क्या पकड़ा जाता है यह बात मैं आगे चलकर समझाऊंगा यहाँ इतना ही बहुत है। अगर चित्त एक लम्हा (क्षण) के लिए भी ठहरता है तो एक लम्हा की धारणा की शक्ति आ गई। अब इस एक लम्हा की धारणा को धीरे-२ बढ़ाते जाना चाहिए, और वह ब-आसानी बढ़ाई जा सकती हैं।"

" जब चित्त एक विशेष समय तक के लिए वृत्तियों के निरोध के साथ एकाग्र (इकट्ठा) हो जाय और कुछ देर तक इस हालत में रहने लग जाय तो उसी का नाम ध्यान है। ध्यान के भी मायनें हैं किसी चीज को पकड़ रखना। इसकी तरकीब

में आगे चल कर बतलाऊंगा।"

"जब इस ध्यान में घनापन आ गया और जो भी एक हालत में रहने लगा तब इसी हालत का नाम समाधि है, समाधि के मायने हैं समता को धारण कर रखना इसके सिवाय समाधि और कुछ नहीं। जिस समय योगी इसका मजबूत होगया प्रत्याहार में बाकायदगी आ गई, ध्यान में महवीयत (एकाग्रता) आने लगी और समाधि लगने लगी फिर उसमें समता आप ही आप आ जायेगी, और समता के आ जाने से वह अपने रूप का व अपनी ज़ात का साक्षात्कार कर सकेगा। इसकी जिन्दगी बदल जायेगी और वह बन्ध और मोक्ष दोनों के ऊपर आ जायेगा। यह अष्टाङ्ग योग का निचोड़ है।"

पार्वती "प्रभो! समता तो किसी अवस्था में भी रहकर प्राप्त की जा सकती है इसके लिए साधन की क्या आवश्यकता है?"

शिव "हे पार्वती! मनुष्य साधन के तबका पैदा हुआ है। उसे सहारा लेने की आदत पड़ गई है। इसलिए समता चाहे हर स्थान पर उसे मिल जाय मगर विवेक नहीं आता, न अनुभव बढ़ता है। जब वह अपने घट के अन्दर खास-२ मकामात पर चित्त को एकाग्र अथवा यकसू करके उस समता को धारण कर लेता है तब वह राज़ पूरी तौर से उस की समझ में आ जाता है फिर वह चाहे जिस हालत में रहे और जहाँ चाहे रहे समता उससे दूर नहीं होसकती। समता भ्रू-मध्य में है, समता कण्ठ में है, समता हृदय में है, समता नाभि में है, समता इन्द्रिय में है, समता मूलाधार में है। इस अभ्यास से योगी की इतनी शक्ति बढ़ जाती है कि वो मूलाधार के कुण्डल बांधे हुए कुण्डली के

फन को बुलन्द करके पहले सहस्रार के स्थान को मिला कर उसके मुँह को खोल देता है और फिर उसे ऊँचे शिखर पर ले जाकर वहाँ उस शक्ति और शक्तिमान् के रूप को देख लेता है । शक्ति-मान् आधार है और यह शक्ति उसकी आधार थी जो सूत्र के आकार में नीचे उतर कर मूलाधार में कुण्डलाकार बन गई थी । इस पिण्ड की जितनी ताकत है वह सब की सब इसी मूलाधार चक्र के आधीन रखी गई है । जितनी पिण्ड की इन्द्रियाँ हैं वही देवता हैं, इनको गण भी कहते हैं और इस मूलाधार का धनी जो इनका अधिष्ठाता है इसी नजर से गणपति या गणेश कहलाता है । जिसने अपने पिण्ड का संशोधन कर लिया वह गणेश-शक्ति और गणेशक्रिया का अधिकारी हो जाता है । इसी सूक्ष्म मूलाधार का स्थान शिवनेत्र है । वहाँ भी एक क्रिया की जाती है, ब्रह्माण्ड से ऊँचे चढ़कर परब्रह्माण्ड में यह मूलाधार है और पर-ब्रह्माण्ड से परे मस्तिष्क के ऊपर जहाँ माथे से बाल मिलते हैं जिसे भँवरगुफा का मुकाम कहा जाता है वहाँ भी यह मूलाधार है । जिसमें जैसा अधिकार और संस्कार है उसके अनुसार उसे तालीम और दीक्षा दी जाती है । संस्कार का बीज धीरे-२ उत्तम श्रेणी की उन्नति पर पहुंचा देता है । गुरु उनकी योग्यता को देखकर धीरे-२ ऊँची चढ़ाई में मदद देता रहता है और उनकी मामूली जिन्दगी में परिवर्तन कराता हुआ उन्हें कुछ का कुछ बना देता है ।

"ऐ पार्वती ! यह साधन बहुत ही आसान और कुदरती है । जद्दो-जहद और मेहनत-मश-

क्त से काम लेने वाले जप, तप और संयम, नियम के अभिमानी कामयाबी से महरूम रह जाते हैं जो कुदरती तौर पर सहज रहते हैं, इस साधन में लगे रहते हैं वो कामयाभ हो जाते हैं और कामयाबी सिर्फ इन्हीं के हिस्से में आती है।

"हाँ, एक बात जरूर है योग का साधन बगैर गुरु की मदद के कभी न किया जाय। जब तक पूरा गुरु हाथ न आवे तब तक सिर्फ किताबों को पढ़कर या सुनी-सुनाई बातों को जानकर अमल व शुगल में हरगिज नहीं लगना चाहिए। वरना खतरात का सामना करना पड़ेगा। गुरु का मिलना निहायत जरूरी और लाजमी है। अगर गुरु नहीं मिला और उसने मन-मता के साथ साधन शुरू कर दिया तो बीमारियों का शिकार हो जायेगा, और इसका दिमाग भी खराब हो जायेगा। दिमाग की खराबी का असर शरीर पर भी अवश्य पड़ेगा। और फिर सारा किया-कराया काम बिगड़ जायेगा। वक्त अलग बरबाद होगा इसलिए गुरु की तलाश और मदद निहायत ही जरूरी है।

—○ आवश्यक सूचना ○—

मानव मन्दिर के सत्संगियों को सूचित किया जाता है कि वे मानव मन्दिर के सम्बन्ध में पत्र-व्यवहार करते समय अपना नम्बर जो कि ऐड्रेस के प्रारम्भ में लिखा होता है उसे अवश्य लिखने की कृपा करें ताकि आपको पत्र का उत्तर मिल सके। यदि नम्बर न लिखा गया होगा तो आप के पत्र का उत्तर देने में कठिनाई होगी।

एस० एल० सेठी
सैक्रटरी

चाहें या इस संसार से पार जाना चाहें या इस रचना से या दृश्यों से पूर्व की दशा में जाना चाहें उन्हें सीधा, सच्चा मार्ग प्राप्त हो जाये । यह मार्ग प्राप्त होना छोटी बात नहीं है । कहा गया है :-

सतगुरु शब्द को चीन्हत नाही, कैसे होय उबारा ।
जारि भूंज कोयला करि डारै, फिर फिर लें अवतारा ।

प्राय: सारे संसार के जीव दु:खी हैं और कष्ट में हैं। कोई निर्धन है, कोई देह से रोगी है । किसी को पुत्र नहीं है, किसी स्त्री का पति मर गया है, किसी की पत्नी मुंहजोर है, किसी को उसका लड़का दु:खी करता रहता है। तात्पर्य यह है कि यहाँ सब कोई किसी न किसी कारण से दु:खी और कातर दृष्टि में आता है। थोड़ा विचार करो। यह दशा जो हमारी दिखाई पड़ती है किसने उत्पन्न की है ? जिसने इस संसार को बनाया है। लोग इस निर्माता की स्तुति या प्रार्थना करते रहते हैं। देवी-देवता, ईश्वर-परमेश्वर को पूजते रहते हैं । अब देखिये जो लोग पूजते हैं उनकी क्या स्थिति है ? स्वामी दयानन्दजी को विष दिया गया। सन्तों पर कहर ढाया गया है। भक्तों को बुरी प्रकार से सताया गया है। यदि इन दशाओं में मैं यह कहूँ या सन्तों की वाणी यह कहे कि सृष्टि निर्माता बड़ा निर्दयी है तो इसमें क्या भूल है ? क्या झूठ है ? तो तुम ही बताओ।

गुरु अर्जुनदेव के, गुरु तेगबहादुर के, ईसामसीह के और अन्य सन्तों के साथ क्या व्यवहार हुआ है। तुम ही देखो और निर्णय करो। जब इस जगत् की यह दशा है तभी तो कबीर साहब ने अपनी वाणी में कहा है, कि दुनिया के दु:ख दूर करने के लिये परमात्मा अवतार लेते रहते हैं। तुम अच्छे - २ भक्तों को देखो जब समय आया उनके मस्तिष्क घूम गये और वह ऐसे काम कर गये जो लज्जा-जनक हैं। यह संसार क्या है ? यदि तुम तह में जाकर देखो तो वास्त-

विकता का ज्ञान होगा। तब तुम्हें मेरी बातों पर विश्वास आयेगा।

सन्तजन भी दु:खों से मुक्त नहीं हैं। अभी-२ ही सन्त कृपाल सिंह जी महाराज ढाई महीने अस्वस्थ होकर अस्पताल में रहे। जो जगन्नियंता है इसने सन्तों और फकीरों को भी क्षमा नहीं किया है। शम्स तवरेज मौलाना रूम के मुर्शिद थे, पिछली आयु में इनको स्त्री की वासना ने सताया, अन्ततोगत्वा मौलाना रूम ने इनका विवाह एक दासी से कर दिया। मौलाना का पुत्र इस दासी पर मुग्ध हो गया और समय पर शम्स तवरेज का सिर उसने काट फेंका। ऐसी स्थिति में इस संसार के निर्माता को निर्दयी कैसे न मानें। जितने मनुष्य मेरे पास आते हैं वो सभी रोते हुए आते हैं। यही कारण है कि सन्त सर्वदा भवसागर से बचने का उपाय बताते हैं। तुम सन्तों की वाणियों को पढ़ो :--

मंगलम् गुरु रूप, अनाम नाम प्रकाशनम्।
मंगलम् शब्दार्थ शब्दाधार शब्द निवासनम्॥

अन्त में सोचता हूं कि क्या कोई सन्तों के वचन सुनने से दु:खों से मुक्त हो जाता है? या रोगमुक्त हो जाता है? हां! सन्तों के वचनों को समझने से इतना होता है कि मनुष्य सांसारिक कर्मों को एक खेल समझ कर काल व माया से बच जाता है। वह समझ जाता है कि यह सारे का सारा खेल ही है। वास्तव में कुछ नहीं है। ये सारी दशाएँ बदलती रहती हैं। मनुष्य को फिर सब झूठा और खेल ही भासता है। ऐसे ज्ञान से दु:ख उठाता हुआ मानव भी धैर्य व सन्तोष रखता है और उसकी इच्छा पर स्वयं को छोड़ देता है। ये सब मन के कष्ट उसे कष्ट नहीं पहुंचा पाते हैं। साथ ही साथ वह इस ज्ञान के आश्रय से अनामगति में जाने के लिये नाम को पकड़ता है। यह संसार ऐसा है कि कोई यहाँ सुखी नहीं है। हम उसको ही सुखी कह सकते हैं जो सब

कुछ सहर्ष सहन करता हुआ चला जाता है और परमतत्त्व आधार की इच्छा पर रहता है। तुम संसारियों की गति देखो। वह कष्ट और पीड़ा सहते रहते हैं किन्तु इससे निकलने का प्रयत्न या इच्छा नहीं करते हैं। कितने ही लोगों की स्त्रियां तेजमिजाज और सख्त होती हैं। आदमी काम के अतिवशीभूत हो कर स्त्रियों की मार को सहता रहता है साथ ही रोता भी रहता है। उससे यह नहीं होता कि अपने को वश में करके इन पर विजय प्राप्त करले। आश्चर्य है। फिर कबीर साहिब अपनी वाणी में लिखते हैं — इस ज्योति निरंजन या ज्योति स्वरूप ने क्या किया है ? -- सृष्टि की रचना कर डाली है और सदैव के लिये बहुत बड़ी कठिनाई उपस्थित कर दी है किन्तु उसने अपने रूप में हमको बनाया है। ऐसा ही अल्लाह या खुदा के विषय में भी कहा गया है कि वह एक बड़ा भारी इन्सान है। हिन्दु इसको विराट् पुरुष कहते हैं। तुम विचार करो यह सारी रचना कैसे रची गई है। जैसे सत्संगी लोग अपनी-अपनी कल्पना या विचार से मुझे बना लेते हैं, इसी प्रकार उसने यह संसार बनाया है। विचारणीय है कि विचार में कितनी महान् शक्ति है। मैं भारतवर्ष में पहला फकीर होऊंगा जिसने इस रहस्य को प्रकट किया है कि श्रद्धालुओं के अन्तर में उनका गुरु नहीं जाता है। वास्तव में वह इनके दृढ़ विश्वास या विचार का मानचित्र होता है। अन्य गुरु तो इस तत्त्व को गुप्त रखते हैं। मैं ऐसा नहीं करता हूं। अभी ही मुझे एक घटना सुनाई गई है। तीन लड़के खेलने को गये। वह पत्थरों में खेलते थे। एक लड़के की टाँग पर एक बड़ा भारी पत्थर आ गया। उसकी टाँग पत्थर के नीचे दब गई, जिससे पैर का निकलना कठिन हो गया। उस लड़के का पिता मेरा भक्त है। वह लड़का कहता है कि वहां मैं (फकीर चन्द) पहुंच गया तथा उस पत्थर को उठाकर एक ओर फेंक दिया।

वास्तव में मैं तो उस लड़के की सहायता को गया नहीं। मेरे जैसा वृद्ध व्यक्ति कैसे यह कर्म कर सकता है ?

एक व्यक्ति जब अपनी संकल्पशक्ति से अपनी सहायता का सामग्री प्राप्त कर लेता है तो ऐसे ही कोई शक्ति है जो अपने संकल्प से विश्व की रचना करती है और वही शक्ति कर्त्ता पुरुष है। कोई उसे हक कहता है कोई कुछ। सन्त उसे ज़ात (निज रूप) कहते हैं या उसे शब्द का आधार कहते हैं। वह हक है अजर है अमर है। वह क्या है ? यह मुझे ज्ञान है, जानता हूं, उसे देखता भी हूं और अनुभव भी करता हूं। प्रकृति ने उसके प्रकट करने का शक्ति नहीं दी है। वह शक्ति सबसे उच्च शक्ति है। जिन्होंने उसे प्राप्त किया है वह भी यही बात कहते हैं कि वह कहा नहीं जा सकता। अभिव्यक्ति नहीं हो सकती। यहां मुझे किसने पहुंचाया है ? आप सत्संगियों ने जिन्होंने मुझे गुरु माना है। अब मेरा समय आ गया है कि मैं आप लोगों को गुरु मानता हूं। आपके साथ जो घटनाएँ घटी हैं मैंने सुनी हैं। उनसे मेरी दृष्टि खुली है कि सत्य क्या है ?

दाता दयाल महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज, मुझे संकेत में समझाते थे किन्तु वास्तविकता समझ नहीं पाता था। उन्होंने चतुराई से बुद्धिमत्ता से मुझे गुरु बना दिया। आप लोगों के अनुभव से ही मैंने इस रहस्य को समझा है। यह वह रहस्य है जो दाता दयाल मुझे समझाना चाहते थे। अब आप ही समझा हूं।

मैं इस विश्व में अनामी धाम से आप लोगों को सच्चाई सुनाने के वास्ते आया हूं। सुनो–इरविन रोड पर नई दिल्ली में मेरे एक प्रेमी भगवानदास जी गोयल किसी समय रहा करते थे। एक दिन एक युवक मेरे सत्संग मैं गुप्ता जी के क्वार्टर में आ गया। मैंने उससे पूछा तुम कौन हो ? वह बोला मैं भगवानदास गोयल का पुत्र हूं। तुम कैसे आये ?

उसने कहा–बाबा आप मेरी सहायता करते रहते हो। मैंने सुन कर प्रश्न किया कि मैं कैसे तेरी सहायता करता हूं ? वह कहने लगा आपने कई अलौकिक घटनाएँ की हैं। एक समय मेरे ऊपर 80 मन वजन का पत्थर आ गिरा (बाबा आप फकीर) ने कहा तू निकल जा। मैं इस पत्थर को रोक रखता हूं। ऐसी बात सुनता हूं तो मैं अपना आत्मा से पूछता हूं तू सच - २ बता क्या तुझे इन घटनाओं का कुछ पता हैं ? मेरी आत्मा अस्वीकार करती है। यदि मैं आपको अज्ञान में रखूंगा और आप लोगों का धन हड़प जाऊंगा तो मेरा मन मलिन हो जायेगा। जो महात्मा बात छिपाते हैं क्या उनका मन मलिन नहीं होगा ? तुम्हीं बताओ। इस विश्व का निर्माता खुदा या परमतत्त्व आधार है। उसने अपनी प्रसन्नता के लिये यह सब रचना की है। अब यहां एक कीड़ा दूसरे छोटे कीड़े को खा रहा है। बड़ी मछली छोटी मछली को खा रही है। सभी लोग इस दुःख व निर्दयता से घबराये हुए हैं और त्रस्त हैं। एक स्त्री मेरे पास आती है और कहती है मेरे सन्तान नहीं है। कौन यहाँ प्रसन्न है ? सभी दुःखी हैं। कोई कुछ कष्ट या दुःख गाता है कोई कुछ। हम अपने स्वाद या वासनावश सन्तान उत्पन्न करते हैं। यह नहीं विचारते कि इन पर क्या-२ दुःख आवें-गे ? कोई क्षय रोग से मरता है और कोई किसी दुर्घटना से तुम अपने स्वाद के लिये उत्पन्न की हुई सन्तान से आशा करते हो कि वह तुम्हारी पिछली आयु में तुम्हारी सेवक सिद्ध हो। आजकल के बच्चे कहां पितृ-मातृभक्त होते हैं। वह भी दुःखी हैं और उनके माता पिता भी दुःखी हैं। भाव यह कि सभी यहाँ दुःखी हैं। इस कारण संसार में सावधान और चैतन्य अवस्था में रहने की आवश्यकता है।

वियतनाम में क्या हो रहा है ? पूर्वी बंगाल पर क्या गुजर रही है ? इन दुःखों को देखकर सन्तजन कहते हैं कि तुम

इस संसार से सर्वथा के लिये दूर हो जाओ। वह निकालते कैसे हैं? अपने वचनासृतों से। वे संसार से विरक्ति और घृणा करवाते हैं। कहते हैं कि यह दुनिया दुःखों का भण्डार है। यहां सुख नहीं हैं। यदि कुछ सुख है भी तो वह क्षण-भंगुर है। ऐसा सुख अपने साथ दुःख को लिये हुए है। तुम मुझे देखो। मुझे ज्ञान के कारण अपना दुःख अनुभव नहीं होता है किन्तु तुम्हारा दुःख विचलित कर देता है। सभी लोग अपना दुखड़ा मुझे आकर सुनाते हैं। जिससे मेरे मन में कुछ न कुछ प्राक्रतिक रूप से हलचल होती है। स्त्रियों को देखो! वह अपने दुखड़े मेरे पास लाती हैं। युवा, बाल, वृद्ध सभी प्रार्थी हैं।

गत दिनों प्रिंसिपल रलाराम साहिब जो स्वतन्त्र विचार के हैं, उनकी उपस्थिति में मैंने कहा था कि इस विश्व का निर्माता निर्दयी है। इस पर वह बड़े चौकन्ने हो गये, किन्तु मेरे तर्क सुने तो इस बात को मान गये कि यह संसार दुःखों का घर हैं। यह बात सिद्ध करती है कि जिसने हमको बनाया है या उत्पन्न किया है वह बड़ा निर्दयी है। इन दुःखों को सहन करते हुए भी हमें जागृतियाँ नहीं पैदा होती हैं। हम बार-२ जन्मते, मरते हैं, किन्तु स्थाई रूप में इससे बचने का उपाय नहीं करते। यह पागलपन नहीं तो और क्या है? सन्तमत हमें अमरपद एक रस के जीवन में ले जाता है; वह हमें अजर-अमर बना देना चाहता है। हम साधारण मनुष्य न बने रहें किन्तु हममें देवत्व आ जावे। मेरे गुरुदेव ने कहा है—

रहता हूं फर्शे खाक पर, मैं खाकी बना हुआ।
लेकिन है अर्श रहने का, खुश मुकाम मेरा॥

जो बात कबीर साहब ने कही है, या राधास्वामी दयाल ने कही है या और सन्तों ने कही है वह सब पूर्ण व सत्य हैं। इनकी बातों की समझने वाली संगत अभी आई ही नहीं है।

जब तक मनुष्य को इस संसार में पर्याप्त अनुभव न हो जावे और उससे उपराम न हो जावे तब तक मनुष्य का मन आत्मिक जगत् की ओर आकर्षित नहीं होता है। यह भी देखा गया है कि अनधिकारी लोग व्यर्थ में सन्तों और फकीरों को कष्ट भी दिया करते हैं। वह सांसारिक भोगों के इच्छुक हैं किन्तु सन्त लोग तो संसार से अपने को हटाये हुए हैं। यहीं कारण है कि फकीर या सन्तजन अपने में कोई न कोई दोष लगा रखते हैं जिससे सर्वसाधारण उनसे दूर रहें और भीड़भाड़ न रहे। केवलमात्र थोड़े ही आवश्यकता अनुभव करने वाले आदमी ही उनके निकट आयें।

सन्तमत एक मार्ग दिखाता है जिससे मनुष्य सदा-सर्वदा के लिये इन दु:खों से छुटकारा पा जाता है। कोई भाग्यशाली ही अन्तिम पद तक पहुंचता है क्योंकि इस मार्ग में लुभावने तथा पथभ्रष्ट करने वाले अनेक प्रलोभन हैं। इस बीच कोई धन में उलझ जाता है, कोई स्त्री में फँस जाता है कोई और अन्य मान, प्रतिष्ठा आदि वस्तु में अटक आता है और कुछ नहीं तो मन के दृश्यों में ही अनेक अभ्यासी उलझ जाते हैं। जब तक किसी का ध्यान मन से ऊपर नहीं जाता है वह मन से उत्पन्न होने वाले रूपों में या दृश्यों में उलझा रहता है। वह इनको ही सत्य समझ लेता है। जिन कारणों से वह ऊँचे जाने से वंचित रह जाता है। कोई भी हो उसे इस मन के जाल से निकलना होगा अन्यथा उसका जीवन निराशाओं व असफलताओं में नष्ट हो जायेगा। मेरा अपना भी यही हाल रहा है। मैं इस मन के जाल से लम्बे समय तक नहीं निकल सका। तुम लोग मेरे मार्गदर्शक हो। जब से मुझे विश्वास हो गया कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता हूं कोई अमेरिका में, अफ्रीका में, आंध्र या पंजाब में मेरे रूप से मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं और वास्तव में मैं अन्तर्मुखी हो गया हूं, मुझे होना पड़ा है और उससे मैं सच्चाई को प्राप्त कर गया हूं।

इन महात्माओं ने, सन्तों ने, फकीरों ने संसार से अन्याय किया है क्योंकि सच्चाई को प्रकट नहीं किया है। इन्होंने लोगों को अपने डेरे गद्दी तथा पंथों में फँसा रखा है। इस कारण लोग पथभ्रष्ट हो गये। मैं इसके साथ यह भी कहूंगा कि तुम लोग भी स्वतन्त्र नहीं होना चाहते हो। यदि किसी में सच्ची लगन या तड़प होती तो वह परमपद तक या अन्तिम श्रेणी तक स्वयं पहुंच जाता। यहां कौन सी शक्ति है जो उसे रोक रखती है। उसे तो मंजिल तक पहुंचना ही है। चाहे उसे एक महात्मा के पश्चात् दूसरा महात्मा क्यों न बदलना पड़े। मैं स्वयं कितना प्रयास करता रहता हूं जीवों को ऊँचा ले जाने के लिये किन्तु वह ऊपर उठना नहीं चाहते हैं। उन्हें तो संसार और साँसारिकता में फँसा रहने में ही आकर्षण है। कहा है—

"तुमने जगत् को सच्चा समझा है। अब तुम कैसे असलियत को जान सकते हो।"

प्राय: लोग कहते हैं कि तुम दुनिया छोड़ कर जंगल में चले जाओ। वहाँ तुमको वह वस्तु जिसके तुम खोजी हो मिल जावेगी। अनेक लोग सन्यासी या वैरागी हो जाते हैं किन्तु उनको पता नहीं है कि संसार बाहर नहीं है, वह तो तुम्हारे अन्तर में, मन में व विचार में है।

कबीर साहिब ने कहा है—

चल हंसा सत लोक हमारे, छोड़ो यह संसारा हो।
यह संसार काल है राजा, करम का जाल पसारा हो॥
चौदह खंड बसें जाके मुख में, सबको करत अहारा हो।
जार जार कोयला कर डारत, फिर-२ ले अवतारा हो॥

काल है ब्रह्माण्डी मन (Universal mind)। उसने सोचा मैं एक से अनेक हो जाऊँ। उसी एक का यह सारा

पसारा है। यहां पर मन 'अहं' है। कबीर साहब अपनी वाणी में लिखते हैं कि हे धर्मदास! तू इस संसार को छोड़ दे। धर्मदास तो पहले ही लाखों की सम्पत्ति छोड़कर कबीर साहब की शागिर्दी में आ गया था। वह कौन सा संसार त्यागेगा। उसे अब मन की दुनिया अर्थात् संकल्प-विकल्प और दूसरे विचार छोड़ने के लिये कबीर साहब कहते हैं—यही इस वाणी का भाव है।

जो व्यक्ति वास्तविकता को जानने के वास्ते जंगल में जाकर एकान्त में रहना चाहते हैं वह भूल करते हैं। कबीर साहब का एक शब्द तुम और सुनो—

मन के मारे वन गये, वन तज बस्ती माहिं।
कहे कबीर क्या कीजिये, ये मन माने नाहिं॥

यह सारा बखेड़ा मन का है। इस मन को ही सीधा करना है। मुझसे यह संसार नहीं छूटता था। ऐ सत्संगियो! तुम्हारे चरणों के कारण मैंने इस संसार को असार मान लिया है। कमालपुर वाली माई और दूसरों ने जब यह मुझे बतलाया है कि मैं उनके अन्तर जाता हूं—इन उदाहरणों से मेरी आँखें खुल गई हैं। मेरे जीवन का रुख बदल गया है। मैं अब गुरु बनने के विचार से काम नहीं करता हूं और न धन प्राप्त करना ही मेरी वासना है। न मुझे मान की भूख है। मैंने परमशांति पाई है। उसे लुटाता रहता हूं। जिनके भाग्य में कुछ है वह मुझसे ले लेवें। मैं तो स्पष्टवादी मानव हूं। गुरु वास्तविक ज्ञान, सच्ची समझ और विवेक का नाम हैं। मैं तो अब वह काम करता हूं जो एक सच्चे मुर्शिद का है या हो सकता है। यह कहना कि मेरे प्रसाद से किसी को बालक पैदा होगया है, किसी ने मुकदमा जीत लिया है, यह ठीक नहीं है। यहां पर मानव अपने ही कर्म और विश्वास का फल प्राप्त करता है। यह

बात तुम्हारे ध्यान में रहे कि कोई महात्मा, कोई पीर या कोई पैगम्बर तुमको या किसी अन्य को कुछ देता है, ऐसा नहीं है। तुम्हारा अपना विश्वास, श्रद्धा ही काम करती है। तुम्हारा किसी पर भी सच्चा विश्वास क्यों न हो काम बन जाता है। विश्वास सच्चा और पूरा हो। मैं झूठी बात करने को तैयार नहीं हूं। व्यर्थ का यश लेना मुझे स्वीकार नहीं है। कहा है—

ना कुछ किया न कर सके, न करने योग्य शरीर।
जो कुछ किया सो हरि किया, भयो कबीर कबीर॥

हरि ब्रह्मांडी मन (Universal mind) है। यह याद रखो हरि और है, ईश्वर और है और प्रभु की सत्ता पृथक है। सन्त कुछ और हैं। तुम सुखमनी साहब को पढ़ो तब तुम्हारे हाथ कुछ आवेगा।

जब तक कोई व्यक्ति अपने मन को नहीं छोड़ेगा वह सतलोक कभी नहीं पहुंच सकता। जहां मैं बोलता हूं क्या तुम लोग मेरी बात को समझ सकते हो। यहां पर कोई विरला जीव ही मेरे भावों तक पहुंच सकता है और समझ सकता है। लोग राधास्वामी मत, सन्तमत, कबीर मत के पैरोकार होते हुये भी सबके सब काल मत के पुजारी हैं। यहाँ कोई व्यक्ति सच्चा रहस्य बताता नहीं है। न कोई सच्ची बात को समझता है। सबने अपनी २ गद्दियों, डेरों और धामों में लोगों को उलझा रखा है। अनगिनत जनता को अपने पीछे लगा रखा है।

हरि ने जो नियम बनाया है उसे धारण (Follow) करने से तुम्हें लाभ होगा और तुम्हारा जीवन सुधर सकेगा। वह नियम है वैदिक या शिवसंकल्प मस्तु। अच्छा भाव सबका हितचिंतन। यदि कोई विद्यार्थी अपने विचार से मझे

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

गढ़ लेता है और पर्चे हल करा लेता है या वजनी पत्थर मुझसे उठवा कर अपनी जान बचा लेता है तो ऐसे ही अपने अच्छे विचार से अपनी सांसारिक स्थिति सुन्दर बना सकता है। यह संसार विचार का ही तो है। सुदृढ़ विचार से सब कुछ हो सकता है। दाता दयाल (मेरे गुरुदेव) कहा करते थे जैसा ख्याल वैसा हाल, 'जैसी करनी वैसी भरनी' वह एकदम सत्य कहते थे।

इस जगत् में अच्छी प्रकार से जीवन यापन करना हो तो केवल दो ही मार्ग हैं—एक प्रवृत्ति मार्ग दूसरा निवृत्ति मार्ग—प्रवृत्ति मार्ग पर चलने से सांसारिक जीवन की यात्रा सुगमतापूर्वक पूरी हो जाती है। इस मार्ग में अपने विचार व वासनायें व संकल्प अच्छे रखने होते हैं। निवृत्ति मार्ग वह है जिस पर चलने से मनुष्य अपने जीवन में ही जन्म - मरण के चक्कर से छूट जाता है। इसे ही ज्ञान मार्ग भी कहते हैं। यह अत्यन्त उच्च कोटि का मार्ग है। मैं उच्च स्वर से पुकार करता रहता हूं कि जिससे वास्तविक जिज्ञासु आजकल के तथाकथित महात्माओं से बचकर रहें तथा इनके जाल में न आ जायें। सँभल - २ कर अपना जीवन यापन करें। अज्ञानी जन तो मैंने ऐसे भी देखे हैं कि मेरे तलुवे तक चाटते हैं। इससे क्या बनता है? बनेगा तो तब जब कि वे मेरी शिक्षानुसार जीवन यापन करेंगे। मेरी बातें ऐसे लोगों के लिये विशेष उपयोगी हैं।

तुम लोग हमेशा शुभ विचार रखो, अच्छी आशा रखो उस सर्वेसर्वा पर विश्वास, श्रद्धा रखो। मीरा बाई के बारे में तो सभी जानते हैं कि उसने विष को जो उसे मारने के लिए

दिया था, कृष्ण का प्रसाद ही जाना। उस पर उस विष ने अपना प्रभाव नहीं किया। विश्वास व विचार में बड़ी भारी शक्ति होती है। इससे तुम स्वयं ही अनुमान लगा सकते हो। इस पकार जो लोग मुझ पर विश्वास करते हैं कि फकीर बाबा जो कुछ कहता है वह नितान्त सत्य है उनके काम स्वयमेव बन जाते हैं। सेठ मोतीलाल इन्दौर वाले की आयु लगभग बावन वर्ष की थी। उनकी पत्नी भी पचास की आयु वाली रही होगी और उसे मासिक धर्म भी आना रुक चुका था। मुझ पर विश्वास रखने से सन्तानवती हो गई। उसे कोई सन्तान न थी और वह दुःखी रहा करती थी। डाक्टर ने भी उसे उत्तर दे दिया था कि वह सन्तान उत्पन्न करने के योग्य नहीं है। संयोगवश वह मेरे सत्संग में आने लगी। एक दिन उसने मुझ से प्रार्थना की कि उसे बालक चाहिए। मैंने उसे प्रसाद दे दिया जिससे उसे सन्तान हुई। वह डा० से जाकर कहने लगी कि आप लोग तो कहा करते थे कि मुझे बच्चा नहीं हो सकता। अब मेरे यहां बच्चा हुआ है। उसे पुत्र प्राप्त हुआ। प्रश्न उत्पन्न होता है कि उसे पुत्र किसने दिया? उत्तर यह है कि उसके दृढ़ विश्वास ने उसे लड़का दिया है। ऐसे ही मेरे पास एक नहीं दर्जनों उदाहरण हैं। ऐसी अवस्था में मैं यह राय दूंगा कि तुम लोग सदैव आशावादी रहो और यह विश्वास रखो कि जो कुछ भगवान् करता है वह अच्छा ही करता है। ऐसा विश्वास रखने से तुम्हारे सब काम स्वयमेव होते चले जावेंगे। जिनको मुझ पर विश्वास होता है उनके सब काम अपने आप अच्छे हो जाते हैं। ऐसा देखने में आया है।

तुम्हारी नाव तुम्हारे अच्छे संकल्पों से ही पार होनी है। अतः तुम सदा शुभ विचार रखो। यही है हरि का नियम। तुम अपने बालक को हीन विचार या अशुभ विचार मत दिया करो। तुम लोग मुझे देखो। दाता ने मुझे विचार दिया था कि तू फकीर है, फकीराना काम किया कर, जीवों से हमदर्दी रखा कर। मैंने इस संस्कार को पचा लिया हैं। इसी विचार से अपने जीवन में सतत कर्म में लगा हुआ हूँ। तुम किसी के विषय में कभी भी अशुभ न सोचो। किसी को बुरी बात न कहो। यह विचार का जगत् है। बुरा सोचने से न केवल दूसरों का बुरा होगा तुम्हारा भी अहित होगा।

काल बुरा नहीं है। राधास्वामी मत वाले व्यर्थ ही में काल के पीछे डंडा लेकर घूमते हैं। काल को बुरा कहते रहते हैं। वाणी में आता है कि यह काल इस जगत् का भूप है, राजा है, यह सत्य है। इसलिए अधिकारी जिज्ञासुओं को काल से परे की स्थिति सतलोक में जाने की राय दी जाती है।

सर्व रचयिता जगत् नियन्ता ज्योति पुरुष है अथवा ब्रह्म है। आजकल विज्ञान ने भी यह सिद्ध कर दिया है विज्ञान बताता है कि (Milky path) आकाश गंगा के परे एक बड़ा भारी सूर्य है। वहां से कास्मिक किरणें प्रोटान्स तथा इलेक्ट्रोन्स उत्पन्न होते रहते हैं, जिससे इस सृष्टि का व्यापार या जीवन संचालित होता है। सारी शक्ति मन की एकाग्रता में हैं। जो व्यक्ति अपनी इच्छा या वासना को एकाग्र करता है, दृढ़ करता है उसकी मांगें अवश्य पूरी होंगी। सफलता कदम चूमेगी। वर्तमान सन्त, महात्मा ऐसा ही करते हैं। वह अपने मन में यह इच्छा लिए बैठे रहते हैं कि उनके डेरे, धाम

गद्दियाँ बन जावें और उनके डेरे, गद्दी आदि बन गये। मेरी वासना या इच्छा यह होती है कि जो दुःखी तथा अशान्त व्यक्ति आते हैं वे सुखी बन जायें और शान्ति प्राप्त करें। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि मेरी संगत में आने वाला व्यक्ति मुझ से लाभ उठा कर ही जावे। मेरे पास जो स्त्रियाँ आती हैं, बच्चे आते हैं या युवक आते हैं मैं उनके लिए केवल शुभ भावना ही देता हूँ और उनका हितचिंतन करूँ, भला चाहूँ इससे अधिक मेरे पास और कुछ भी नहीं है। जादू करना या फूक मारना मुझे आता नहीं है। यह मेरे अधिकार में नहीं है। लोग कहते हैं बाबा करनी वाला है। ऐ भोले-भाले जीवो ! मैं किसी के विचार का खंडन नहीं करता हूँ, किन्तु मैं इतना अवश्य कहूँगा कि ये सब श्रद्धालुओं का अपना स्वयं का विश्वास है। इससे ही उनकी इच्छायें स्वयमेव पूरी हो जाती हैं। मैं व्यक्तिगत रूप में कुछ नहीं करता हूँ। मेरी शुभ भावनायें सदैव प्रत्येक के साथ रहती हैं। वास्तव में मुझे गुरुदेव ने काम दिया है। मैं निबल, अबल, अज्ञानी जीवों की सहायता प्रत्येक समय करता रहता हूँ। स्पष्ट बतलाने के बाद भी अज्ञानी जीव झूठे सन्त, महात्माओं से लूटे जायें तो मैं क्या कर सकता हूँ ? मैं उच्च श्रेणी का सत्संग देता रहता हूँ। अ, आ, इ, ई पढ़ाना मेरा काम नहीं है। जो व्यक्ति मेरी बातों को ध्यान से सुनेगा और उन पर आचरण करेगा यह आवश्यक है कि उसे लाभ हो। तुम अपना संकल्प सदैव अच्छा रखा करो। अपना इष्ट शब्द और प्रकाश को बनाओ। जो लोग मुझे गुरु मानते हैं मैं हाथ बांध कर उनसे प्रार्थना करता हूँ कि फकीर चन्द का ध्यान उनको ऋद्धि-सिद्धि और शक्ति देगा और मनो-कामनाएँ पूरी होंगी किन्तु वह इस साधन से सतलोक

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

नहीं जा सकेंगे। यह मुझे ज्ञात है कि मेरी स्पष्टवादिता तथा सत्य के कारण मानवता मन्दिर को लाभ नहीं हानि है। हाँ करेंसी नोट या नकदी की बोरियाँ मानवता मन्दिर में नहीं आवेंगी तो भी मैं अपनी आत्मा को बचाता हूँ। अपनी वासनाओं को शुद्ध रखने के लिए मुझे सच्चाई और स्पष्टवादिता का आश्रय ही लेना आवश्यक है।

हमारा आदिस्थान जहाँ से हम आये हैं, वह है जिसका शब्द में संकेत है। हम लहर के रूप में वहाँ से निकल कर आये हैं और हरि ने जो सृष्टि अपने संकल्प से बनाई है हम इसमें फँस कर मार्ग में भटक गये हैं। दूसरे शब्दों में हमें यहाँ से छूटने या निकलने का मार्ग नहीं प्राप्त हो रहा है।

सारे जीव यहाँ लुट गये हैं। किसी ने सच्चाई नहीं बताई। अधिकारी जिज्ञासु को तो अपने घर जाना ही है। उसे कोई न कोई मार्ग बताने वाला मिलेगा ही, जो उसे अपने घर ले जावेगा। यह सब अपने कर्मों का फल है। जो कर्म व्यक्ति करता है, उसे आवश्यक रूप में उसका फल पाना ही पड़ता है। मुझे बंगला देश वालों से प्रेम अवश्य है। वहाँ जो कुछ हो रहा है उसका मुझे दुःख नहीं है। 1947 से पूर्व वहाँ क्या-२ झगड़े-दंगे नहीं हुए। चुन-चुन कर वहाँ से हिन्दुओं को निकाला गया। अगर कर्म-फल के रूप में वह दण्ड प्राप्त कर रहे हैं तो क्या अनुचित है।

अपनी तरफ तुम देखो। तुम्हारे घरों में क्या-२ नहीं हो रहा है। सास - बहू के झगड़े, बाप - बेटे की अनबन,

देवरानी-जिठानी का डाह, दुश्मनी। तात्पर्य यह कि हर प्रकार से घरों में धूल उड़ाई जाती है। इसका निश्चित प्रभाव होगा और इनका बुरा फल उन सब को अवश्य प्राप्त होगा जो उस बुराई के कारण हैं। मैं अपने उत्तर-दायित्व का अनुभव करता हूँ। यही कारण है कि मुझे स्पष्ट कहना पड़ता हैं। मेरे वचनों के अनुमोदनार्थ सन्तों की वाणी है। मैं आगे बताऊंगा कि अपने मन की चंचलता को कैसे दूर किया जाय। अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ। अब भी मेरे मन में ऐसे विचार उत्पन्न होते हैं जिनको मैं नहीं चाहता हूँ। मुझे ज्ञानदाता ने ज्ञान दिया है मैं तत्काल अपने उन विचारों को नष्ट कर देता हूँ। देखता हूँ मन मुझे कहाँ ले जा रहा है उसी समय मैं सँभल जाता हूँ। खुदा या ईश्वर तो मैं बन नहीं गया। हाँ ज्ञान होने के कारण मैं दुःख में उलझ नहीं जाता हूँ। आप लोगों को यही राय दूंगा कि तुम लोग अपने मन की प्रत्येक समय निगरानी, चौकीदारी किया करो जिससे यह कहीं बहक न जावे। यह मन बड़ा निर्दयी है। इसके जाल से अपना व्यक्तिगत अनुभव ही निकाल सकता है। कोई सत्पुरुष ही अपने सत्संग द्वारा मन से किसी को छुड़ा सकता है।

यह संभव है कि मेरी व्यक्तिगत बातें किसी को पसन्द न आवें। इस दशा में यह कोई आवश्यक नहीं है कि आप लोग मेरे सत्संग में आवें।

0—0

सत्संग परमसन्त हजूर मानव दयाल

डा. आई. सी. शर्मा जी महाराज

लखनऊ 4-3-1987

※ सच्चे सुख की अनुभूति ※

भाई सुख से जनम बिताओ ।

सो सुख है गुरु चरन प्रेम में, निन गुरु के गुन गाओ ।।
सुख नहीं जग प्रपंच में भाई, सुख नहीं भोग बिलासा ।
सुख है गुरु की प्रीति रीति में, नित आनन्द हुलासा ।।
सुख नहीं मान बड़ाई दिखाये, सुख नहीं धन परिवारा ।
सुख है अन्तर वृत्ति जमाये, गुरु का लेके सहारा ।।
सुख नहीं बाहर परबत बन में, सुख नहीं सैर तमासा ।
सुख है तेरे अन्तर भाई, अन्तर कर जिज्ञासा ।।
नित उठ गुरु की भजन बंदगी, नित गुरु संगत करना ।
घट में भजन हो, घट में संगत, घट गुरु नाम सुमिरना ।।
तेरे घट में गुरु बिराजे, गुरु सत चित्त अनन्दा ।
सो गुरु रूप है तेरा भाई, ढूंढ़ त्याग सब धन्दा ।।
घट में पैठ बैठ कर पूजा, घट मन्दिर उजियारा ।
घट में पिंड ब्रह्मांड पसारा, घट में सुख विस्तारा ।।
राधास्वामी सतगरु दाता, घट में तेरे बिराजे ।
घट दर्शन घट सेवा संगत, घट सुन आनन्द बाजे ।।

राधास्वामी ,

मेरी अपनी ही आत्मा के स्वरूप या अंश सत्संगी भाई और बहनो ! जहाँ तक मुझे मालूम है, यह शब्द दाता दयाल जी महाराज ने शब्दानन्द की माँ के लिए लिखा था। दाता दयाल जी महाराज उन्हें माई कहकर पुकारते थे। दाता दयाल जी महाराज जब भी इलाहाबाद जाते थे, शब्दानन्द जी के पिता के घर पर ही ठहरा करते थे। शब्दानन्द जी की माँ अपने हाथ से उन्हें खाना बनाकर खिलाया करती थी। उन्होंने 25–30 शब्द माई के नाम से लिखे हैं। उन्हीं शब्दों में से एक आज का शब्द है :—

"माई सुख से जनम बिताओ"

सारा जगत् (जड़, चेतन) सुख की अभिलाषी करता है। पौधे हों, पशु-पक्षी हों, मनुष्य हों, देवता हों, दानव हों सभी सुख की आकांक्षा रखते हैं, और दुःख से बचने की कोशिश करते हैं। सुख एक ऐसी प्रवृत्ति है, जो हमारा पालन-पोषण करती है। पौधों को सूर्य की किरणो से तृप्ति होती है तो पौधा सूर्य की किरणों से सुख का अनुभव करता है। पौधे के अन्दर यह अनुभव अर्धचेतन अवस्था में होता है। जड़ जगत् में आनन्द ही आनन्द है। जड़ जगत् में अचेतन अवस्था है, अर्थात् सुषुप्ति की अवस्था है। यदि देखा जाये तो सारा जगत् ही सुख का अनुभव कर रहा है। पशुओं में, प्राणियों में, आत्मचेतना है। स्वप्न में भी आनन्द होता है। कभी-२ भयानक स्वप्न भी आ जाते हैं, लेकिन स्वप्न में अच्छे अनुभव भी होते हैं। स्वप्न में जो आनन्द होता है, वह जागृत अस्वथा में नहीं हो सकता है। पशु-पक्षियों में भी आनन्द लेने की जिज्ञासा होती है। हम बीमार होते हैं क्या आपने कभी पशु-पक्षियों को भी बीमार होते

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

देखा है ? हालांकि हम आँधी-तूफान से बचने के लिए बड़े-२ मकान बनाते हैं, लेकिन पशु-पक्षी आँधी-तूफान आने से पहले ही अपने-२ घोसलों में पहुँच जाते हैं। इसका कारण यह है कि पशु-पक्षियों का तीसरा नेत्र खुला हुआ होता है, जो क्रियाशील होता है लेकिन मनुष्य का तीसरा नेत्र क्रियाशील नहीं है, हालाँकि उसके अन्दर बहुत ही ज्यादा शक्ति है। सुख का भण्डार उसके अन्दर भी है और वह है सुरत, जो तीसरे नेत्र में रहती है। इसी को आत्मा का स्थान कहते हैं। सूफी इसी को रूह कहते हैं। इसी को ही जीवात्मा कहा जाता है। इसी को सन्तों ने सुरत कहा है। सुरत का स्थान दोनों भौंहों के बीच में है। इसी बात को सन्तों ने स्पष्ट कर दिया है। इसी के अन्दर से जो शक्ति की धार चलती है, उसे कुण्डलिनी शक्ति कहते हैं। यह शक्ति जब नीचे उतरती है, तो मंडल बनाती है। यह शक्ति आँखों से होती हुई कण्ठ में आकाश का मण्डल बनाती है। इसी मण्डल को कण्ठचक्र या विशुद्ध-चक्र भी कहते हैं। फिर यह शक्ति हृदय पर वायु मण्डल बनाती है जिसे अनहद चक्र कहते हैं। स्वामी जी महाराज ने इसे अनहद पद्म या अनहद कमल भी कह दिया है। स्वामी जी महाराज ने कोई नई बात नहीं कही, यह सब तो राजयोग में कुण्डलिनी योग में बहुत अच्छी तरह से स्पष्ट किया गया है। हृदय का अर्थात् वायु मण्डल का स्थान शिव के आधीन है। इसके नीचे नाभि है जो अग्नि का स्थान है जिसे अष्टदल कमल भी कहते हैं। इसका अधिष्ठाता बिष्णु है। इसके नीचे स्वाधिष्ठान चक्र है। यहाँ पर प्रजनन शक्ति है। यहाँ का अधिष्ठाता ब्रह्मा है, यहाँ से जाकर यह शक्ति गुदा चक्र में सो जाती है।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

यह पृथ्वी तत्त्व का स्थान है। इसका अधिष्ठाता गणेश हैं। जो कुछ भी मनुष्य को अनुभव होता है चाहे वह बाहर का हो या अन्दर का, इसी शक्ति से होता है। सन्तों ने इसे सुरत कह दिया। सुरत क्या है? सुरत है ध्यान। इस शक्ति के मौजूद होने का प्रमाण हैं-हमारे रोजाना के अनुभव। इसी शक्ति से आनन्द की प्राप्ति होती है।

इसी शक्ति से दुःख का निवारण होता है। यह शक्ति अपने आप काम कर रही है। किसी भी मनुष्य के शरीर के किसी भी भाग में अधिक दर्द होने पर, यह शक्ति अपने आप ऊपर चली जाती है, जिससे मनुष्य बेहोश हो जाता है। यदि इस शक्ति को बाहर की तरफ लगा दें, तो बाहर सफलता मिलेगी। पश्चिम ने इस शक्ति को बाहर लगा रखा है, जिससे पश्चिमी देशों ने भौतिक जगत् में बहुत उन्नति कर ली है। हालाँकि सुरत का मतलब ध्यान है, लेकिन ध्यान को प्रवाहित करने वाली शक्ति ही सुरत है। वही संकल्प-शक्ति है। यह संकल्प की शक्ति उस परमतत्त्व का अंश है, जिसने अपनी शक्ति से सारा जगत् बनाया। यही शक्ति जगत् को वापस खींच या समेट लेती है। हरएक मनुष्य के अन्दर यह शक्ति मौजूद है। लेकिन साधारण मनुष्य अपनी मर्जी से अपने शरीर को अपने आप में समेट नहीं सकता है। इसी शक्ति को कुण्डलिनी शक्ति कहते हैं। इस शक्ति को कुण्डलिनी शक्ति इसलिए कहा गया है कि यह अविनाशी अंश की धार गुदा चक्र में सो जाती है। इस प्रकार यह अंश शरीर और चक्रों में रत होने के कारण सुरत कहलाता है।

सुरत को निरत कर देना जीवन का उद्देश्य है। सुरत को अच्छाई-बुराई दोनों से हटा कर ऊपर ले जाने से वह निरत हो जाती है। जब वह निरत होती है तो ब्रह्माण्ड से गुजरती हुई सतलोक पहुंचती है और निरत हो जाती है। लेकिन उससे आगे चलकर के आखिरी अवस्था पर (निजधाम पर) निरत से अरत हो जाती है। 'अरत' शब्द मैंने ही गढ़ा है। यह शब्द किसी किताव में नहीं मिलता। यह अनुभव का विषय है। निरत का अर्थ क्या है? निरत का अर्थ है कि दुनिया के जो हमारे बन्धन हैं, प्रपंच में फँसना है, उन से निकल जाना। प्रपंच क्या है? प्रपंच सारे जगत् में पांच तत्त्वों का फैलाव है। इन पांच तत्त्वों के फैलाव में, देखने, सुनने, स्पर्श करने, चखने, सूँघने आदि से जब सुरत को बाहरी सन्तुष्टि के लिए लगा दिया जाता है तो वही प्रपंच फँसाव है। दाता दयाल जी महाराज कह रहे हैं:-

सुख नहीं जग प्रपंच में माई

आप देखोगे कि हरएक व्यक्ति अपनी सुरत को जग-प्रपंच में फँसाये हुए है। इस सुरत को जग के प्रपंच में लगाने से इस प्रपंच की प्रवीणता प्राप्त हो जाती है। व्यक्ति इस सुरत को जगत् की खोज में इतना लगाये, इतना लगाये कि उसमें पूर्णता हासिल कर लेगा। लोग समाज सेवा करते हैं। समाज-सेवा करने वाले समझते हैं कि इन्हें गुरु की जरूरत नहीं है। वे समाज-सेवा में आनन्द लेते हैं। उनको इस बात का पता नहीं है कि यह सब आनन्द सुरत के झुकाव के कारण ही है। शक्ति का भण्डार तो ऊपर से आ रहा है। जिधर उस शक्ति को लगा दिया, उधर ही पूर्णता

प्राप्त हो जाती है। मैं यह नहीं मानता कि पश्चिम में सुरत का प्रयोग नहीं हो रहा है, बल्कि पश्चिम में सुरत का प्रयोग ज्यादा हो रहा है। इसका सबूत यह है कि पश्चिम ने सुरत का ध्यान इस जगत् को जानने के लिए, सुख की प्राप्ति के लिए लगा दिया। आज वह इसे आणविक शक्ति के प्रयोग में लगा रहे हैं। आईन्स्टाइन बड़ा भारी वैज्ञानिक था। उसने सारे जगत् की व्याख्या की है, और ध्यान लगा करके एक सूत्र निकाला वह सूत्र है $E=Mc^2$ यानि E का अर्थ है एनर्जी मास अर्थात् घनत्व यानि कि ठोस पदार्थ+गति और वर्ग अर्थात् गति का ऊपर उठना। सारे जगत् के अन्दर जो कुछ भी अस्तित्त्व रखता है, वह परमतत्त्व का फैलाव है। उसमें गति है। उसकी चाल है। वह चाल दुगुनी, चौगुनी, अठगुनी होती चली जाती है। मास (घनत्व) तम है अर्थात् तमोगुण है। तमोगुण के बाद रजोगुण है। रजोगुण गति पैदा करता है। रजोगुण के बाद है, सतोगुण। सतोगुण ऊपर ले जाता है। यह व्याख्या $E=Mc^2$ की है। आईन्स्टाइन ने तो केवल सांख्य की व्याख्या की है। यह सारा जगत् सांख्य पर चल रहा है। इस सांख्य को सन्तमत खूब अच्छी तरह से मान रहा है। 'सार वचन' सांख्य पर आधारित है। मुझे बताओ कि मैं कैसे मानूँ कि सन्तमत सनातन धर्म से सम्बन्धित नहीं है? विज्ञान भी इसी से सम्बन्धित है। हमें विज्ञान के आविष्कारों की ओर ध्यान देना चाहिए। यह त्रिगुणात्मक जगत् है। इस जगत् में ठोसपना है अर्थात् रजोगुण है। ठोसपन में आनन्द है। रजोगुण तेजी से ऊप[illegible] ओर ले जाता है।

रजोगुण ब्रह्मा है। सतोगुण विष्णु है। तमोगुण शिव है। इस प्रकार शरीर है ब्रह्मा, मन है विष्णु, शिव है आत्मा। यह तीनों जगत् में हैं। वैज्ञानिकों ने अपनी सुरत को यह देखने के लिए लगाया कि अणु का रूप क्या है? गति किस प्रकार चलती है? उन्होंने ध्यान लगाकर सांसारिक सुख के लिए भौतिक तत्त्वों का प्रयोग किया जिसके फलस्वरूप आज पश्चिम के अन्दर इतने अधिक शारीरिक सुख तथा सुविधाएँ उपलब्ध हैं, जो यहाँ पर नहीं हैं। यहाँ पर लोग कई बीमारियों से मर जाते हैं, लेकिन अमेरिका में सुविधाएँ होने के कारण ठीक हो जाते हैं। आम आदमी खाने-पीने में ही सारा ध्यान लगाता है, लेकिन अन्त तक भी उसे पूरा सुख नहीं मिलता। अमेरिका में अत्यधिक सुख-सुविधाएँ हैं। वहाँ पर कार का थोड़ा सा भी दरवाजा खुला रह जाये तो कार अपने आप बोलती है "दरवाजा बन्द करो" अमेरिका में दूध के अन्दर मिलावट करने पर फाँसी की सजा है; जब कि कत्ल करने पर फाँसी की सजा नहीं है। वहाँ पर दूध के अन्दर 60% मक्खन होता है। आजकल लोगों का कहना है कि 35-40 साल के बाद मक्खन नहीं खाना चाहिए। इससे दिल का रोग हो जाता है, इसलिए वहाँ पर लोग मक्खन निकला हुआ दूध पीते हैं और मक्खन निकला हुआ दूध असली दूध से ज़्यादा महंगा होता है क्योंकि उसमें मेहनत की गई है। मुझे ऐसा लगता है कि भारत की जगह अमेरिका में दूध-दही की नदियाँ बहती हैं। सारा दूध गाय का होता है। वहाँ पर सारा काम मशीनों के जरिये होता है। गाय का दूध भी मशीनों के द्वारा निकाला जाता है। गायों को संगीत के माध्यम से शब्द सुनाकर दूध निकाला जाता है। मैं बता रहा हूं कि सुरत को भौतिक उन्नति में लगाने से भी जब मनुष्य को सुरत-साधन मिल

जाते हैं, साधना भी बन सकती है। आप कहते हैं कि पश्चिम निकृष्ट है, प्रपंच में है। पश्चिम वालों ने अपनी सुरत को प्रपंच के अन्दर ऐसा लगाया कि हर चीज़ के अन्दर सुविधा हो गई लेकिन था तो साधन। आईन्स्टाइन ने ध्यान लगाकर बता दिया कि विश्व की रचना क्या है ? हम तो जानते हैं कि विश्व की रचना तीन गुणों पर आधारित हैं और ऊपर बैठा हुआ पुरुष तीन गुणों से परे है। आई-न्स्टाइन भी कहता है कि जो असलियत है, जो सत्ता है, वह देश और काल से परे है। मैंने आईन्स्टाइन की जीवनी पढ़ी है। उसमें आईन्स्टाइन ने लिखा है "मैंने जर्मन भाषा में उपनिषदों का अनुवाद पढ़ा वहाँ से मुझे ध्यान आया कि देश, काल है ही नहीं"। इस प्रपंच के अन्दर कैसे सुख हो सकता है ? उपनिषद् के आधार पर उसने बताया कि प्रकाश एक सैकिण्ड के अन्दर एक लाख छियासी हज़ार मील की रफ्तार से चलता है। उसी आधार पर आज अन्तरिक्ष में जाने के लिए वायुयान बना रहे हैं जो उसी रफ्तार से जाते हैं, और ठीक पहुंचते हैं। यदि कोई व्यक्ति प्रकाश की गति से सौरमण्डल में जाये, तो उसका जब एक साल गुजरा होगा तब यहाँ पर सौ साल गुजर चुके होंगें। लोग मर चुके होंगे और वह जिन्दा होगा :—

"सुख नहीं जग प्रपंच में माई,
सुख नहीं भोग बिलासा।"

पश्चिम के लोग साँसारिक दृष्टि से हर प्रकार से सुखी होते हुए भी दुःखी हैं। वे लोग अब आध्यात्मिकता की ओर आ रहे हैं। वे लोग सुखी क्यों नहीं हैं ? क्योंकि उनकी सुरत बाहर लगी हुई है और बाहर सुख नहीं है। इस सुरत

को अगर आप ऊपर की तरफ लगा दें, तो यही सुरत आप को मालिक से मिला देगी। सुरत ख्याल से चलती है। ख्याल इच्छाशक्ति से चलता है। इच्छा अर्थात् संकल्प की स्वतन्त्रता ही परमतत्त्व का प्रमाण है। आप प्रारब्धकर्मों के कारण ही यहाँ सत्संग में आये हैं। आपको सत्संग में कहा जाता है कि सद्गुरु से प्रेम करो। लेकिन उस प्रेम को अपनाना या न अपनाना आपके अधिकार में है। अब जो चीज आपके अधिकार में है, उसे दूसरों की भलाई के लिए इस्तेमाल करो जो आपके अधिकार में नहीं है उसको आप कर ही कैसे सकते हैं। जिस चीज को आप समझते हैं 'मैं कर रहा हूँ' वह वास्तव में आप नहीं कर रहे होते। मैं आप को सच्ची बात कहता हूँ। आपका किसी से सम्पर्क है या किसी से प्रेम है, कोई आपका शत्रु है, कोई आपसे नफरत करता है, कोई ईर्ष्या करता है, यह तो होता ही है प्रारब्ध कर्मों के कारण। आप कहते हो "वह मेरा शत्रु हो गया, मुझे उससे नफरत हो गई।" जो आपके साथ घटित होता है जैसे आप प्रोफेसर हो गये, आपने Ph. D. करली, यह सब तो होना था। आप सिर्फ एक बात कर सकते हैं—या तो आप प्रेम से जी लो या नफरत से। यदि आप प्रेम को अपना लोगे तो आपका दु:ख सुख में बदल जायेगा। अपनी सुरत को सिर्फ शरणागत की अवस्था में ले जाओ :—

'सुख नहीं जग प्रपंच में माई
सुख नहीं भोग बिलासा।'

भोग-बिलास में स्थायी सुख नहीं है। आप गृहस्थ में बेशक रहो। खाओ-पीओ, मौज करो मगर भोजन ऐसा खाओ जो आपके शरीर को ठीक रखे, जो भोजन पौष्टिक

हो, सात्त्विक हो। लेकिन यदि हम इस भोजन में ही अपने सुख को ढूंढ़ेंगे, तो हमें ज्यादा तकलीफ हो जायेगी। इसका मतलब यह नहीं कि तुम दुनिया से विरक्त हो जाओ गीता कहती है :—

बुद्ध्या मनसा कायेन केवलैरिन्द्रियैरपि
योगिन: कर्म कुर्वन्ति सर्वथा आत्मशुद्धये।

अर्थात् योगी वे हैं जो मन से, बुद्धि से, शरीर से और इन्द्रियों से भी सदा - सर्वदा आत्मा की शुद्धि के लिए कर्म करते रहते हैं। अरे! आपके कर्मों का क्षय तो सहज में ही कराना है। यह जरूरी नहीं कि आप कानों में अँगुलियाँ डालकर बैठो, प्रकाश देखो या अन्य चीज़ें देखो। आपके कर्म सद्गुरु के सम्पर्क में आने से, सत्संग सुनने से सहज में ही कट जायेंगे। यदि आप भोग-विलास के लिए ही कर्म करते हैं तो उसमें फँसते ही चले जाओगे। ज्ञानेन्द्रियों का प्रयोग तो करना ही है, लेकिन उसमें फँसना नहीं है। मन से किये गये कर्म को मालिक की तरफ लगा दो, सब झगड़े समाप्त हो जायेंगे। बुद्धि के द्वारा किया गया कर्म भी मालिक को दे दो। वैसे बुद्धि का मतलब है अहंकार। आप अहंकार को भी मालिक के सुपुर्द कर दो। यदि तुमने मन और बुद्धि मालिक को दे दी तो तुम्हारा शरीर बिलकुल स्वस्थ रहेगा। इसके बाद तुम जो भी कर्म करोगे, उसके अन्दर एक ऐसी अनुभूति होगी जो आनन्द से भी परे होगी। आपके शरीर में आनन्द होगा, खाने-पीने में भी आनन्द मिलेगा। आपके अन्दर एक विशेष स्फर्ति पैदा हो जायेगी।

कर्म किसे कहते हैं :—

'सर्वथा आत्मशुद्धये'

कर्म वह क्रिया है जो आत्मशुद्धि के लिए, ऊपर जाने के लिए किया जाता है :—

"सुख है गुरु की प्रीति रीति में, नित आनन्द हुलासा।"

सच्चा सुख गुरु की प्रीति करने में ही है जो आपको ऊपर की ओर ले जाता है। ऊपर उठाने के कई तरीके हैं। जैसे राजयोग है, कुण्डलिनी योग है, तन्त्र योग है। लेकिन ये सब बहुत कठिन हैं। सद्गुरु से प्रेम करना ही सबसे आसान तरीका है। प्रेम के अन्दर आदमी एकाग्रचित्त होता है। प्रेम क्या है? प्रेम है अपनी सभी भावनाओं को, अपनी सभी इच्छाओं को, अपने सभी संवेगों को एक केन्द्र पर केन्द्रित कर देना। आपके सभी विचार, सभी भाव और अनुभाव, संवेग, सभी इच्छाएँ, आकांक्षाएँ, प्रेम रूपी राजा के मन्त्री हैं। अब बताओ लोग कहते हैं कि सभी इच्छाओं को मार डालो। इच्छाओं को मार देना या एकदम दबा देना बहुत ही खतरनाक है :—

"सुख है गुरु के प्रीत रीत में"

गुरु से प्रेम करने की रीति यही है कि सब कुछ उसी के हवाले कर दो। सुख बाहर नहीं है। जब आपकी सुरत गुरु की प्रीति-रीति में केन्द्रित हो जायेगी तो दुनिया की कोई चीज नहीं है जो आपको उपलब्ध न हो। लोग समझते हैं कि गरु को सब दे देने से हम खो बैठते है। यह खौना नहीं है, बल्कि वास्तव में अपने निजरूप को पाना है :—

"सुख नहीं मान बड़ाई दिखाये, सुख नहीं धन परिवारा।
सुख है अन्तर वृत्ति जमाये, गुरु का लेके सहारा ॥"

सन्तमत आपके परिवार को आपसे अलग नहीं करता। परिवार के सदस्य एक दूसरे की सहायता के लिए होते हैं। आप अपने परिवार वालों के साथ प्यार करो अपना फर्ज निभाओ, परन्तु उनके मोह में फँसो नहीं। जितना फँसोगे उतना ही आपको अन्त में दुःखी होना पड़ेगा। असली सुख अन्तर्मुखी होने में है। लोग अपनी वृत्तियों को बाहर बिखेर कर जग के प्रपंच में फँसते हैं। यदि हम अपनी वृत्तियों को सभी संवेगों को, अन्तर्मुखी करके एक स्थान पर केन्द्रित करदें, तो संसार के, परिवार के, सभी सुख आपको मिल जायेंगे। इसलिए गुरु का सहारा लेकर अपनी वृत्तियों को अन्तर्मुखी कर दो। गुरु का सहारा कब होगा जब उससे प्रेम करोगे :—

"सुख नहीं बाहर पर्वत बन में, सुख नहीं सैर तमासा।
सुख है तेरे अन्तर माई, अन्तर कर जिज्ञासा ॥"

पर्वतों पर जाने में या वन में जाने में या सैर-सपाटा करने में सुख नहीं है। इसका यह मतलब नहीं कि आप सैर करने नहीं जाओ। जाओ परन्तु अगर आप सैर-सपाटा केवल शौक के लिए कर रहे हैं तो उसमें सुख नहीं है। सुख तो केवल अपने अन्तर में ही है। जितना सुख बाहर है उससे बहुत अधिक सुख अन्तर में है। दुनिया में आदमी कितना भी घूम ले, लेकिन उसको वह अनुभव नहीं होगा जो अपने अन्तर में होगा। आप अपने अन्तर में अनेक प्रकार के लोक-लोकान्तर देख सकते हो। विज्ञान भी वहां तक नहीं

पहुंच सकता, जहां सन्त लोग अपने अन्तर में पहुंच जाते हैं। तो असली सुख की प्राप्ति, परमसुख की प्राप्ति, गुरु के सहारे से अन्तर-दृष्टि जमाने से ही होगी। इसलिए अपनी वृत्ति को बाहर की बजाय अन्तर की तरफ ले जाओ। आप की वृत्ति अन्तर की तरफ कब जायेगी ? जब आपको जिज्ञासा होगी। जिज्ञासा क्या है ? जिज्ञासा है किसी भी चीज को जानने की चाह अर्थात् प्रेम की वह तड़प जो हमें मालिक से मिला दे। जब सद्गुरु से प्रेम की ऐसी तड़प होती है, तो वह सद्गुरु का नाम जपते - २ सदगुरु को हर जगह देखने लगता है। ऐसा प्यार सन्तगति को प्राप्त होकर विश्व-व्यापी बन जाता है अर्थात् सारे जगत को अपने प्यार के घेरे में ले लेता है। इसलिए सन्त का प्यार एक व्यक्ति, एक परिवार, एक जाति, एक देश या एक पृथ्वी से नहीं होता है। उसका प्यार तो सारे संसार से, कोटि-२ ब्रह्मांड से होता है। अब बताओ आप जिस प्यार को, जिस दृष्टि को, केवल अपने परिवार पर समाप्त कर देते हो और अन्त में आपको दुःख होता है कि आपने परिवार वालों के साथ इतना किया और आपके साथ उन्होंने कुछ नहीं किया इस दुःख से कहीं ज्यादा अच्छा है कि उस सद्गुरु से प्रेम करे जो आपको अपने जैसा बना दे। "सुख है अन्तर-दृष्टि जमाये" का यह मतलब है। 'अन्तर कर जिज्ञासा' जिज्ञासा का अर्थ है जानने की इच्छा। जिज्ञासा से ही हम सब कुछ करते हैं। हम चाहते हैं कि हमें पैसा मिल जाये, हमें पैसा मिल जाता है। लेकिन फिर भी हमारी तृप्ति नहीं होती। आप जितनी दुनियावी चीजों की जिज्ञासा या इच्छा करेंगे वह उतनी ही बढ़ती जायेंगी। इसलिए अन्तर्मुखी होने की ही जिज्ञासा होनी चाहिए :

नित उठ गुरु की भजन बन्दगी, नित गुरु संगत करना।
घट में भजन हो घट में संगत, घट गुरु नाम सुमिरना।

ऊपर जाने के दो रास्ते हैं। (1) बाहर का सत्संग (2) घट का सत्संग। सबसे पहले गुरु की बाहरी संगत करनी चाहिए। लेकिन मुसीबत तो यह है कि आप गुरु को मनुष्य समझ करके गुरु के दोष निकालते हैं और जिस उद्देश्य के लिए आये थे उसको भूल जाते हैं। "नित गुरु संगत करना' अर्थात् प्रतिदिन सत्संग में जाना बहुत जरूरी है।

"सत्संग शिला पर मल मल धोये चूनर मैल भगाये।"

बार-२ सत्संग सुनना बहुत जरूरी है। बाहरी सत्संग से आपका नक्शा बदल जायेगा, आपके विचार बदल जायेंगे, आपका दृष्टिकोण बदल जायेगा। मैं समझता हूं कि गुरु के पास में रहने से भी आप पर जरूर असर होगा। 1966-67 की बात है। मैं उदयपुर में पढ़ाता था। वहाँ चन्द्रशेखर नाम का एक लड़का था। वह बड़ा क्रोधी था। वह मेरे साथ किसी टूर पर एक हफ्ते रहा, उसका क्रोध समाप्त हो गया। मैं हैरान रह गया कि उसके ऊपर इतना प्रभाव कैसे पड़ा? सत्संग का प्रभाव है। खासकर, वह सत्संग जिसके अन्दर अन्तर से शब्द निकल रहे हैं। इसलिए जितना भी होसके सत्संग सुनना चाहिए। जब आपको बाहर का सत्संग तब्दील कर देगा तब आप अन्तर में जा सकोगे।

आन्तरिक सत्संग सुमिरन, ध्यान और भजन है। सुमिरन में सद्गुरु से लिये हुए नाम का अजपाजाप यानि कि मानसिक सुमिरन होता है। यह बहुत आवश्यक है कि जिस नाम का सुमिरन किया जाये, वह नाम धुनात्मक हो। धुनात्मक नाम वह शब्द है, जो मनुष्य अपनी बुद्धि से नहीं

बनाता बल्कि मालिक का ऐसा नाम होता है जो स्वयंभू कहा जाता है। स्वयंभू का मतलब वह शब्द है जो अपने आप पैदा हुआ हो। इसके विपरीत वर्णात्मक शब्द वह होता है जो मनुष्य अपनी बुद्धि से आविष्कृत करता है। वर्णात्मक शब्द किसी वस्तु की व्याख्या करता है। जैसे ताजमहल वर्णात्मक शब्द है। अगर किसी ने ताजमहल देखा न हो तो उसे यह कह कर समझाया जा सकता है कि ताजमहल सफेद संगमरमर की शानदार इमारत है। जिसके भीतर में एक बड़ा गुम्बद है और जिसके चारों किनारों पर संगमरमर के चार मीनार हैं। धुनात्मक शब्द की ऐसी व्याख्या नहीं की जा सकती। इसका केवल अनुभव किया जा सकता है। जैसे 'सोहं' शब्द है। यह शब्द हमारे अन्दर चल रहा है। हर सांस में 'सोहं' शब्द की ध्वनि चल रही है। इसे कोई भी व्यक्ति सुन सकता है। इसके साथ - २ 'सोहं' का अर्थ भी है। जिसका मतलब है "मैं वह हूं" अर्थात् "मैं परमपुरुष हूं"। इसी प्रकार ओम् भी धुनात्मक शब्द है। जो धुनात्मक शब्द सद्गुरु एक शिष्य को उसकी प्रकृति के मुताबिक देता है, वह सुरत को ऊपर ले जाता है। यही नाम होता है। नाम के साथ - २ उस नामी का जानना जरूरी है जो इष्ट है। एक सच्चा गुरु भी इष्ट हो सकता है। उसी इष्ट पर ध्यान लगाया जाता है। ध्यान का मतलब गुरु के रूप पर ध्यान लगाना है। भजना का अर्थ अन्तर में धुनात्मक शब्द को सुनना है। यह शब्द अलग - २ दर्जों पर अलग प्रकार से सुना जाता है।

यह आन्तरिक सत्संग सत्संगी के मन को एकाग्र कर

देता है और उसका अनुभव सहस्रदल कमल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न, भँवरगुफा से गुजरता हुआ सतलोक एवं सत्पुरुष अलख, अगम से होता हुआ उसे अनामी से मिला देता है। इस अनुभव के बाद भी बाहरा सत्संग की जरूरत रहती है।

'तेरे घट में गुरु बिराजे, गुरु सत चित आनन्दा।
सो गुरु रूप है तेरा माई, ढूंढ त्याग सब धन्धा ॥"

इस पद्य का मतलब यह है कि अन्तर में जो अनुभव होते हैं वे ही मनुष्य को बाहर के क्षण-भँगुर अनुभवों से हटाकर सत्‌चित् और आनन्द के अन्दरूनी अनुभव कराते हैं। बाहरी जगत् भी सत्, चित्, आनन्द है, ब्रह्मा, विष्णु और शिव है। मनुष्य अपने आप में भी सत्, चित्, आनन्द हैं अर्थात् शरीर, मन और आत्मा हैं। मनुष्य का सत्, चित् आनन्द पिण्ड है। जगत् का सत्, चित्, आनन्द ब्रह्माण्ड है, जिसका अनुभव त्रिकुटी में होता है। इसी ब्रह्मांड का सूक्ष्म अनुभव सुन्न, महासुन्न और भँवरगुफा का है, जिसे पर-ब्रह्मांड कहा जा सकता है। लेकिन पिण्ड, ब्रह्मांड और परब्रह्मांड से आगे जो चौथा पद है वह है सत्पुरुष एवं सतलोक का पद । वहां पर भी सत्पुरुष से आगे अलख, अगम और अनामी का अनुभव होता है। अलख, अगम, अनामी सच्चिदानन्द से परे है। इस प्रकार जब हम अपने घट में गुरु का ध्यान करते हैं अर्थात् आन्तरिक सत्संग करते हैं तो हमें अनुभव होता है कि जो सत्, चित्, आनन्द बाहर है वही हमारे अन्दर है। जैसे हमारा गुरु है वैसे ही हम हैं। दूसरे शब्दों में, जैसे परमतत्त्व है वैसे ही हम हैं :

घट में पैठ बैठ कर पूजा, घट मन्दिर उजियारा।
घट में पिण्ड ब्रह्मांड पसारा, घट में सुख विस्तारा॥

जैसे कि मैंने पहले बताया है कि मालिक को मिलने के लिये अपनी दृष्टि को बाहर से हटाकर अन्तर्मुखी करना ही आन्तरिक सत्संग है। जो कुछ बाहर है वह अन्दर है। इसलिए बाहरी जगत् में ढूँढने से स्थायी सुख नहीं मिलता। अन्तर्मुखी होने से शरीरिक सुख भी मिलता है, मानसिक यानि कि ब्रह्मांड का सुख भी मिलता है और परब्रह्मांड आत्मा का अनन्त सुख भी मिलता है। इसलिए दाता-दयाल जी ने कहा है कि सुख का असली भण्डार अन्तर में है :—

"राधास्वामी सतगुरु दाता घट में तेरे बिराजे।
घट दर्शन घट सेवा संगत, घट सुन आनन्द बाजे।"

जैसे मैंने आपको पहले बताया है कि मालिके कुल राधास्वामी दयाल परब्रह्मांड से भी परे सतलोक, अलख-लोक, अगमलोक और अनामी धाम से भी परे सर्वाधार है। उसी सर्वाधार का अंश हरएक जीव के अन्तर में मौजूद है। वही अंश सुरत के रूप में प्रकाश को देखता हुआ और निरत होकर शब्द का अनुभव करता हुआ जब अशब्दगति में चला जाता है तो वह उसी सर्वाधार में विलीन होकर एक हो जाता है जिसे राधास्वामी कहा गया है, क्योंकि वह राधास्वामी सब कुछ देने वाला है, सर्वाधार है इसलिए दाता दयाल जी ने कहा है कि "जिस सर्वाधार की तुम्हें तलाश है, वह तुम्हारे अन्तर में है। हर समय

तुम्हारे साथ है। उनके दर्शन से उनकी सेवा, पूजा से और उनके सम्पर्क से शब्द और अशब्द के अनुभव का आनन्द भी तुम्हारे अन्दर है। इसलिए इस सारे शब्द में दाता दयाल जी ने कहा है कि सच्चे सुख का जीवन वही है जिसमें हम सदा—सर्वदा मालिक के प्यार को अपने अन्तर में अनुभव करते हैं। इन शब्दों के साथ ही मैं आज का सत्संग समाप्त करता हूं।

सबको राधास्वामी !

शोक समाचार

सत्संगी जन को बड़े दुःख के साथ सूचित किया जाता है कि प्रसाद नगर दिल्ली निवासी श्री वेद प्रकाश अग्रवाल की पूज्या माता श्रीमती द्रौपदी देवी का स्वर्गवास दिनांक 4-10-87 को हो गया। अग्रवाल-परिवार हज़ूर मानव दयाल जी महाराज का अत्यन्त श्रद्धालु भक्त है।

मानवता मन्दिर परिवार व सत्संगी मालिक राधास्वामी दयाल से प्रार्थना करते हैं कि दिवंगत आत्मा को शान्ति दें तथा उनके शोकाकुल परिवार को सहन-शक्ति प्रदान करें।

जनरल सेक्रेटरी

मासिक सन्देश

परम सन्त हजूर मानव दयाल

डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज

मेरे परम प्रिय सत्संगियो,

राधास्वामी परम दयाल जी सहाई।

पिछले मासिक सन्देश में मैंने आपको 5 सितम्बर 1987 तक की गतिविधियों से सूचित किया था। हम 6 सितम्बर प्रातःकाल दिल्ली से रवाना होकर सायंकाल 6 बजे तक होशियारपुर पहुंच गये। मानवधाम का सफल सत्संग और सत्संगियों का उत्साह मानवता धर्म के इतिहास में हमेशा एक यादगार बना रहेगा। जिस मानवता धर्म को ऋषियों ने चलाया और जिसका पुनरुद्धार आदि गुरु कबीर साहिब से लेकर आज तक सन्तों ने किया है, वास्तव में मालिके कुल सर्वाधार परमतत्त्व राधास्वामी की ही देन है। प्रायः लोग मानवता धर्म एवं मानवता शब्द को समझ नहीं पाते। जहाँ कहीं मानववाद की बात होती है, लोग यही समझते हैं कि मानवता का अर्थ शिष्टाचार है एवं सद्व्यवहार है। व्यावहारिक दृष्टि से शिष्टाचार दयाभाव, कोमलता, मधुर-

भाषा आदि मानवता में सम्मिलित तो अवश्य हैं, किन्तु मानवता या शिष्टता का यह व्यवहारमात्र ही मानवता नहीं है। इसी प्रकार मानव का अर्थ परिवार, समाज व राष्ट्र में रहने वाला व्यावहारिक प्राणिमात्र ही नहीं है। इसी भुलावे में लोग मानव को केवल लौकिक दृष्टि से देखते हैं, जब कि वास्तव में ऐसा नहीं है।

मानव शब्द 'मनु' तत्त्व से निकला है। मनु का अर्थ "केन्द्र या सत्य" है। इसलिए मानव वही है जिसके शरीर, मन और बौद्धिक अहंकार के पीछे सत्य का एवं परमतत्त्व का अंश मौजूद है। यही 'मनु'तत्त्व ही अचल, प्रतिष्ठित, अविनाशी विशुद्ध आत्मा एवं साक्षी है। दूसरे शब्दों में, मानव वही है जिसे शरीर, मन और अहंकाररूपी आत्मा से परे, अपने निज स्वरूप, राधास्वामी तत्त्व का अनुभव हो गया है। इसी अनुभव एवं सुरत के ज्ञान को ही विवेक कहा गया है। कबीर साहिब ने इसी दृष्टि से मानव एवं मनुष्य की परिभाषा देते हुए लिखा है :—

"गुरुपशु नरपशु त्रियापशु वेदपशू संसार।
मानुष वाको जानिये, जा में विवेक विचार॥"

दूसरे शब्दों में, किसी विशेष धर्म, सम्प्रदाय या डेरे की सदस्यता ही मानव को मानव नहीं बनाती। इसी प्रकार किसी भी प्रभावशाली अधिकारी एवं राजनैतिक नेता के पीछे चलने वाले नरपशु को मानव नहीं कहा जा सकता। मानवता कामवासना आदि में लिप्त होने, एवं विषय-भोग आदि से ग्रस्त होने से नहीं पनपती। किसी विशेष धर्मग्रन्थ को पढ़कर उसमें लिखे हुए विचारों पर कट्टरता से चलने को भी मानवता नहीं कहा जा सकता। मानव वही है, जिसमें

सत्य, असत्य का विवेक उत्पन्न हो गया है, जिसने यह जान लिया है कि उसका शरीर, उसका मन और उसकी प्रकाश-मयी आत्मा, एवं सत्‌चित् और आनन्द भी उसका निजस्वरूप नहीं है। उसका निजस्वरूप विशुद्ध अविनाशी परमतत्त्व, एवं सत्पुरुष है। इस अनुभव से वह सच्चा मानव, सभी प्राणियों में विशेष कर सभी मनुष्यों में, शरीर, मन और आत्मा से तथा रंगरूपों से परे सत्पुरुष का अनुभव करता है। वह हर प्रकार के भेदभावों से ऊपर उठकर हर मानव के अन्दर राधास्वामी दयाल को उपस्थित मानता और जानता है।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सच्ची मानवता, सच्ची राधास्वामी अवस्था है। यही दृष्टिकोण, कबीर साहिब से लेकर राधास्वामी के सभी अवतारों ने अपने अनुभव के आधार पर प्रस्तुत किया है। इसी धारा में मैं भी आप को सत्संगों और मासिक सन्देशों में चेतावनी देता आ रहा हूं। मैंने यह व्याख्या इसलिए की है कि लोगों के मन में यह भ्रम न रहे कि मानवता का अर्थ समाजवाद एवं लौकिक व्यवहार मात्र ही है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जब 'मनु'तत्त्व एवं सत्य पर मनुष्य स्थिर हो जाता है तो उसका 'तन थिर मन थिर सुरत निरत थिर' हो जाते हैं। इसी स्थिरता के कारण विशेष कर शरीर और मन की समता के कारण ही मनुष्य का लोक और परलोक दोनों बन जाते हैं। राधा को स्वामी का अनुभव हो जाता है एवं सुरत को शब्द का अनुभव हो जाता है। स्वामी अपनी ही राधा को अपने में समाविष्ट कर लेता है। न राधा—राधा रहती है न स्वामी—स्वामी रहता है। दोनों मिलकर कुछ और ही हो जाते हैं। इसी

'और' को पहचानने मात्र से हर साधक को परमतत्त्व की झलक दिखाई देती है और उसे नीचे दिया गया पद्य समझ में आ जाता है :—

"अब आदमी कुछ और हमारी नजर में है।
जब से सुना है यार लिबासे बशर में है ॥"

जब तक साधक इस राधास्वामी हालत को नहीं पहुँचता तब तक उसकी साधना अधूरी और निष्फल रहती है। मानव तत्त्व ही राधास्वामी तत्त्व है। इसलिए पूर्ण मानव बनने के लिए, राधास्वामी अवस्था पर पहुँचना बहुत ज़रूरी है। मैं यह बात उन लोगों के भ्रम को दूर करने के लिए लिख रहा हूँ, जो यह समझ रहे हैं कि मानवता राधास्वामी मत से या सन्तमत से कोई अलग मार्ग या धर्म है। मानवता को दृष्टि में रखते हुए ही दुहाई, गाजियाबाद के निकट मानवधाम को बसाया जा रहा है। मानवधाम ही राधास्वामी धाम, एवं परमधाम है। परमतत्त्व आधार दयाल पुरुष, एवं दयाल देश ही हमारा चरम लक्ष्य है। किन्तु दयाल देश में बैठा हुआ दयाल पुरुष, उस समय तक जीवों का उद्धार नहीं कर सकता, जब तक वह कालदेश में आकर मानव के चोले में सद्गुरु वक्त की जिम्मेदारी पूरी नहीं करता। इसलिए ही सन्तमत में जीवित गुरु की अपार महिमा है।

इसी सच्चाई को बाँटने और अपने परमगुरु परम दयाल जी महाराज की आज्ञा का पालन करने के उद्देश्य से ही मैं जगह-२ पर सत्संग देता हूँ। इसी उद्देश्य से ही मैं मासिक सन्देशों में अपने बिखरे हुए अंशों के साथ अपने

अनुभव बाँटता हूं। 20 सितम्बर को मानवता मन्दिर में मासिक सत्संग आयोजित हुआ। इस बार सत्संगियों की अधिक संख्या होने के कारण मानवता मन्दिर के सैक्रेटरी श्री एस. एल. सेठी ने और दफ्तर के व्यवस्थापक श्री शिव प्रसाद ने शामियाने का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया। लोग 18 सितम्बर को ही बाहर से आने शुरू हो गये। 19 सित-म्बर शनिवार सायंकाल भी आरती के बाद सत्संग हुआ। पिछले दो वर्षों से मासिक सत्संग के दो दिन ऐसे लगते हैं जैसे वैशाखी या गुरुपूर्णिमा का उत्सव हो। बटाला के सत्संगी हर महीने सभी सत्संगियों को प्रात:काल नाश्ता और चाय देते हैं। उनकी यह सेवा सराहनीय है। उनकी नि:स्वार्थ सेवा बेमिसाल है।

29 सितन्बर को हम प्रात:काल 7 बजे रवाना होकर चण्डीगढ़ से होते हुए 11 बजे प्रात: के करीब लालरू मण्डी पहुँचे। मास्टर यशपाल गोयल के घर पर लालरू और बाहर के सत्संगी इकट्ठे हो गये थे। उनसे मिलने के बाद यशपाल जी के घर पर ही दोपहर का भोजन किया और 4 बजे तक विश्राम किया। करीब सवा चार बजे से श्री नानक चन्द जी के घर पर सत्संग हुआ। इस सत्संग में लालरू मण्डी और आसपास के शहरों तथा चण्डीगढ़ से आये हुए लोग मौजूद थे। रात्रि के भोजन के बाद हमने श्री नानक चन्द जी के मकान पर विश्राम किया। 30 सितम्बर को करीब 7 बजे प्रात: हम लालरू से रवाना होकर 12 बजे दोपहर के करीब फरीदाबाद पहुँचे। वहां पर राम और उसकी पत्नी जमुना ने हमें बहुत सरल भोजन दिया। एक सब्जी और एक दाल थी, लेकिन हम सबको वह

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

भोजन बहुत अच्छा लगा क्योंकि वह आसानी से पच गया। मैं समझता हूं कि अनेक प्रकार की सब्जियाँ अनेक प्रकार के मसालों में एवं घी में भून कर खिलाई जाने वाली चीज़ बीमारी का कारण बन जाती हैं। प्रसंगवश मैं इस मासिक सन्देश के द्वारा सभी सत्संगियों को बता देना चाहता हूं कि जब कभी मैं उनके यहां सत्संग के लिए जाऊँ, तो कृपा करके मुझे तथा मेरे साथ सभी आने वाले व्यक्तियों को विना मिर्च वाला सरल भोजन दिया करें। थोड़ी देर विश्राम के बाद हम देहली के लिए रवाना हुए और सायं-काल 5 बजे राजपुर रोड पहुँच गये। थोड़ी देर विश्राम के बाद हम 7 बजे के करीब सलवान स्कूल पहुँचे। उस समय तक बाहर से आने वाले सैकड़ों सत्संगी सलवान स्कूल पहुँच चुके थे। मुझे देखते ही उनका प्रेम उमड़ पड़ा और मैं उनसे घिर गया। एक घण्टा वार्त्तालाप के बाद और आशीर्वाद के बाद सभी सत्संगियों को श्री के. पी. वर्मा, श्री यशपाल भाटिया, श्री ऋषि पकाश गुप्ता, श्री महेन्द्र नारंग और उनके साथियों ने भोजन खिलाया। हम रात्रि के विश्राम के लिए राजपुर रोड लौट आये।

दूसरे दिन प्रात:काल हम साढ़े 6 बजे सलवान पब्लिक स्कूल पहुँचे। मैं अपने कमरे में बैठ गया। इस समय तक हजार से भी अधिक सत्संगी मुझे मिलने के लिए इकठ्ठे हो गये थे। ये सत्संगी देहली तथा आसपास के इलाकों से ही नहीं बल्कि दूर-2 से हरियाणा, यू० पी०, पंजाब और कुछ तो राजस्थान, मध्य प्रदेश और आन्ध्र प्रदेश से आये हुए थे। लगातार दो घण्टे इन सत्संगियों को कतारों में आशीर्वाद

देने के बावजूद भी साढ़े 8 बजे तक, सभी लोग मुझ से न मिल सके। पौने नौ बजे सत्संग आरम्भ हुआ। दो हजार के लगभग सत्संगियों ने बड़े ध्यान से 12 बजे तक सत्संग सुना। इस मौके पर सन्त तारा चन्द जी ने भी सत्संग दिया। सत्संग आरम्भ होने से पहले आन्ध्र प्रदेश के चिन्तल बस्ती से आई हुई संगीत पार्टी ने बहुत आकर्षक शब्दों का गान किया। जिसे सत्संगियों ने बहुत पसन्द किया। अन्तर्राष्ट्रीय मानवता संस्थान की ओर से सत्संगियों के भोजन और रहने का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया गया था। आचार्य केप्टिन लाल चन्द ने भी बहुत अच्छा सत्संग दिया। इसी प्रकार आचार्य शब्दानन्द ने गुरु की महिमा पर प्रवचन दिया। आचार्य श्री के० पी० वर्मा ने सारे सत्संग का संयोजन किया। इस प्रकार दो दिन तक सत्संगों का सिलसिला जारी रहा। सभी सत्संगी बहुत ध्यान से प्रेम और श्रद्धा के साथ सत्संग सुनते रहे। स्थान की कमी के कारण लोग सत्संग हाल से बाहर दोनों तरफ खड़े होकर और सत्संग भवन के सामने वाले मैदान में बैठकर सत्संग सुनते रहे। प्यारे सत्संगियों की श्रद्धा और प्रेम दिन-प्रतिदिन बढ़ते ही जा रहे हैं। इस प्रकार परम दयाल जी महाराज का, सन्तों का, राधास्वामी मत एवं मानवता धर्म का सच्चा प्रचार लाखों लोगों तक पहुँच रहा है और जगत्-कल्याण का कार्य सुचारु रूप से सम्पन्न हो रहा है। मेरे प्यारे सत्संगियो यह सब कुछ आपकी श्रद्धा और प्रेम का ही मीठा फल है। मैं आपसे सच्चा और गहरा प्रेम करता हूं और आपको सद्गुरु का रूप मानता हूं।

परम दयाल जी महाराज ने जिस सच्चाई को बता-

कर अपने भोले-भाले सत्संगियों को झूठे गुरुओं से बचाकर सीधे और सच्चे मार्ग पर लगाया है, आज उस सच्चाई को आम लोग और बुद्धिमान लोग भी स्वीकार कर रहे हैं। परम दयाल जी का कहना था कि परमधाम पर पहुँचने के लिए मेरे पास कोई भी नहीं आता। किन्तु आज हालाँकि मुझे अधिकतर पत्र उन लोगों के ही आते हैं, जो अपनी श्रद्धा और विश्वास के कारण मेरा रूप बनाकर अपने काम, इच्छाएँ और कामनाएँ पूरी करा लेते हैं, वहाँ कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो परमधाम पाने के इच्छुक हैं। इसके अलावा यह सच्चा और सीधा मार्ग केवल राधास्वामी मत के सत्संगियों को ही नहीं लाभ पहुँचा रहा, बल्कि सनातन धर्म और अन्य धर्मों के अनुयायिओं को भी इससे बहुत लाभ हो रहा है। जो व्यक्ति एक बार कहीं से माँगकर मानव मन्दिर पढ़ लेता है, वह इसका स्थायी पाठी बनना चाहता है। विदेशों से भी मुझे अनेकों पत्र आते हैं। बहुत से सत्संगी लिखते हैं कि उन्हें मासिक सन्देश बहुत प्यारा लगता है। अनीता साहनी ने माण्ट्रीयाल, कैनेडा से लिखा है कि वह और उसका पति श्री गुलशन साहनी हर महीने मासिक सन्देश पढ़ने के लिए मानव मन्दिर पत्रिका की प्रतीक्षा करते रहते हैं और मासिक सन्देश पढ़ने के लिए उत्सुक रहते हैं। जब तक उन्हें नया मानव मन्दिर नहीं पहुँचता, वे बार-२ पिछले महीने के मानव मन्दिर को शुरू से लेकर अन्त तक पढ़ते रहते हैं। सत्संगियों और दूसरे धर्म के अनुयायिओं की रुचि मानव मन्दिर पढ़ने में बढ़ती जा रही है। वास्तव में यह विश्व के कोने-२ में इसी सच्चाई पर चलने की और

सच्चे मानवता धर्म अपनाने की जबरदस्त माँग हो रही है। प्रकृति के 'माँग और पूर्ति' के नियम के अनुसार मानव मन्दिर पत्रिका जगत्-कल्याण के कार्य में लगातार योगदान दे रही है। इस सन्देश में मैं आपको दशहरे तक की सूचना दे रहा हूं, ताकि मैं तप के विषय में भी कुछ चर्चा कर सकूं।

पिछले मासिक सन्देश में हम वाणी के तप के अन्तिम सोपान, मालिक के जाप के अभ्यास की चर्चा कर रहे थे। मैंने आपको यह बताया था कि एक अन्ध-विश्वासी सनातन धर्मी केवल मौखिक जाप को ही अभ्यास समझता है। सच्चाई तो यह है कि जाप का सीधा - सादा अर्थ मानसिक अजपाजाप एवं उस नाम या मन्त्र का सुमिरन है, जो उस मालिक या नामी का सच्चा और स्वाभाविक नाम हो। ऐसा मन्त्र सद्गुरु ही दे सकता है। वास्तव में, जैसे कि मैंने पहले कहा है, मालिक के नाम का सुमिरन करना, उससे अगाध प्रेम करना है। साधारण जीवन में, जब हम किसी से प्रेम करते हैं तो मन ही मन में उसी के नाम का जाप करते हैं और उसी के रूप का ध्यान करते हैं। सन्तमत में, अभ्यास के तीन सोपान बताये गये हैं—(1) सुमिरन, (2) ध्यान और (3) भजन। नाम के सुमिरन से, मालिक के रूप पर ध्यान लगाने से और भजन एवं आन्तरिक शब्द को सुनने से मनुष्य बहुत जल्दी जीवन्मुक्ति पा सकता है और भक्ति की मस्ती में रहता हुआ लोक और परलोक को बना सकता है। इस सम्बन्ध में मैंने दाता दयाल जी का एक शब्द पिछले मासिक सन्देश में लिखा था और वचन दिया था कि पहले इस शब्द की व्याख्या की जायेगी और उसके बाद सन्तमत

के अनुसार नाम के जाप के बारे में विस्तारपूर्वक चर्चा की जायेगी। यहां पर मैं उस शब्द को आपके लिए फिर लिख रहा हूं :—

पिला दे भक्ति का ऐसा प्याला,
ममत्व मैं अपने मन का खो दूं।
न बुधि रहे और न सुधि रहे कुछ,
अहंपना सारा मन का खो दूं।
जपूं तपूं और भजूं न सुमिरूं,
न योग युक्ति के पन्थ दौड़ें।
न नाम की माला हाथ में हो,
हिये की माला का मनका खो दूं।
वह राग क्या जिस में राग आये,
वह त्याग क्या त्याग में फँसाये।
न बन्ध और मुक्ति का हो खटका,
विवेक घर और बन का खो दूं।
न दुःख की दुविधा न सुख की चिन्ता,
न चित की दुचिता का भय हो किंचित्।
न ज्ञान और ध्यान की हो इच्छा,
विचार साधन यतन का खो दूं।
न द्वन्द निरद्वन्द का हो झगड़ा,
न द्वैत अद्वैत का हो बखेड़ा।
झुका के सिर राधास्वामी पद में,
विचार तक दासपन का खो दूं।

सन्तमत उच्चतम और बहुत गहरी भक्ति का मार्ग है। हालाँकि रामायण और भगवद्गीता में भी इस पराभक्ति की चर्चा की गई है, फिर भी सन्त अवतारों ने इस भक्ति के रस को चख कर जो अनुभव किये हैं, वे हर व्यक्ति को प्रेरणा दे सकते हैं। भक्ति का यह रस विशुद्ध प्रेम का अनुभव है। इस प्रेम में, प्रेमी और प्रीतम अन्त में एक हो जाते हैं। साधन, साधना और साध्य विलीन होकर एक रसात्मक पूर्णानन्द में समा जाते हैं। दूसरे शब्दों में, भक्त, भक्ति और भगवान् एक ही धारा में मनुष्य के अन्तस् में बहने लगते हैं और सहजसमाधि की ऐसी अवस्था का अनुभव होता है जिसमें सभी विरोधाभास समाप्त हो जाते हैं।

इस शब्द के पहले पद्य में दाता दयाल जी कहते हैं कि मालिक मुझे ऐसी भक्ति दे कि मैं उसके रस को पीकर "मैंपने" को खो दूं। यह 'मैंपना' ही मनुष्य और परमतत्त्व में झीना सा पर्दा है। जब मनुष्य पराभक्ति में पूर्णरूप से अपने प्रीतम से मिल जाता है, तो उसकी 'मैं' नहीं रहती। वह 'मैं' के स्थान पर 'तू' को ही देखता है और नीचे दिये पद पर अमल करता है:—

"तू तू करता तू भया, मुझ में रही न हूँ।
बलिहारी तेरे नाम की, जित देखूं उत तूं।"

किन्तु इससे आगे चलकर, ममत्व इतना खो जाता है कि 'मैं' और 'तू' दोनों समाप्त हो जाते हैं। दूसरे और तीसरे पद्य में अहंपने को, सुध और बुध भूलने को भक्ति कहा गया है और उसके साथ ही साथ निरन्तर सुमिरन और भजन

में विलीन हो कर विसमाधि की अवस्था में चले जाने की अवस्था बताया गया है। इस अवस्था में योगयुक्ति और नाम की माला को भी त्याग देने की बात कही गई है। केवल इतना ही नहीं बल्कि अजपाजाप को भी त्याग देना इस भक्ति का लक्षण है।

इसी शब्द के अनुसार मालिक की याद में ऐसे राग को भी त्याग देने की बात कही गई है, जिसमें मोह हो जाये। इसी प्रकार, पराभक्ति की सहजसमाधि के अन्दर, बाहरी त्याग की जरूरत नहीं है; क्योंकि संसार को त्याग देने वाला त्यागी भी अपने त्याग का अभिमान करता है और अहंकार से मुक्त नहीं होता।

आगे चलकर, इसी शब्द में यह कहा गया है कि भक्ति की उस अवस्था में भक्त, अविभक्त हो जाता है एवं उसमें 'तू' और 'मैं' नहीं रहते। इसलिए उसे बन्ध और मुक्ति दोनों से छुटकारा मिल जाता है। ऐसी सहजसमाधि में रहने वाला भक्त गृहस्थ और संन्यास के चक्कर में नहीं पड़ता और सुख, दुःख व चिन्ता से ऊपर उठ जाता है। न उसे चित्त की चिन्ता सताती है और न उसे ज्ञान और ध्यान की इच्छा होती है। इसलिए उसे यह भी ध्यान नहीं रहता कि साधन और यत्न क्या हैं? वह हर प्रकार के वाद-विवाद से ऊपर उठ जाता है। उसे द्वैत और अद्वैत के बखेड़े से कोई ताल्लुक नहीं होता। जब वह शरणागत होकर, अपने मालिक के आगे सिर झुका देता है, तो न मालिक मालिक रहता है, न दास दास रहता है।

ऐसी सहजसमाधि की हालत को ही 'राधास्वामी' हालत कहा जाता है। हरएक व्यक्ति, चाहे वह शिक्षित हो चाहे अशिक्षित, चाहे बूढ़ा हो, चाहे जवान हो, चाहे बालक हो, इस राधास्वामी हालत को सहज में पा सकता है। किन्तु इस सहज अवस्था पर पहुंचने की सहज विधि केवल वह सच्चा सद्गुरु बता सकता है, जो खुद इस अवस्था पर पहुंच कर अनायास अनन्त दया के कारण अपने इस अनुभव को सभी जीवों के उद्धार के लिए बाँटता है। इसलिए सद्गुरु के सत्संग से हरएक व्यक्ति इस सहज अभ्यास को अपनाकर सहजसमाधि में पहुंच सकता है।

अगले मासिक सन्देश में इसी चर्चा को जारी रखते हुए सन्तमत के अनुसार नाम के जाप की व्याख्या की जायेगी और वाणी के तप के सम्बन्ध में अभ्यास के अन्तिम सोपान की पूर्ण आहुति करने की कोशिश की जायेगी। मेरी अपनी ही आत्मा के बिखरे हुए मेरे अपने ही अंश - मेरे प्यारे सत्संगियो इन शब्दों के साथ मैं इस महीने के सन्देश को समाप्त करता हूं। मैं सच्चे दिल से आपको आशीर्वाद देता हूं कि इन मासिक सन्देशों से प्रेरणा लेते हुए आप धीरे - २ राधास्वामी हालत को पा जायें और आपके लोक तथा परलोक दोनों बन जायें।

सबको राधास्वामी !

आपका फकीरमय,
मानव।

***

मेरे सद्‌गुरु मेरे आराध्य

कठिनाइयों और समस्याओं की बहुलता के बीच हर युग की अपनी एक प्रमुख समस्या होती है, एक लक्ष्य होता है और एक युग-सन्देश होता है। आम जनता समय की समस्याओं को अबोध बालक की तरह झेलती है, प्रबुद्ध तबक़ा उसे महसूस करता हुआ समाधान ढूँढता है और युग-पुरुष अवतार लेकर युग की समस्या का समाधान करता हुआ, जनता को राहत बख्शता है और युग को आगे ले जाता है। युग-पुरुष ही युग-धर्म निर्धारित करता है, युग को अपना सन्देश देता है और युग-कर्म कराता हुआ मानव को उसकी आखिरी मंजिल पर ले जाता है। सन्तमत में उसे ही सन्त सद्‌गुरु वक्त कहते हैं।

आदि सन्त कबीर साहिब से लेकर परमसन्त परम दयाल जी महाराज तक सभी सन्त सद्‌गुरुओं ने अपने वक्त की प्रमुख समस्या, मनुष्य को सबसे बड़ी जरूरत और माँग की समुचित पूर्ति की और मनुष्यमात्र को महान् संकट से उबार कर उसे मंजिले मक़सूद पर पहुंचने का सीधा-सच्चा रास्ता दिया। किन्तु आज का मानव अपनी भौतिक विज्ञानी सभ्यता के एकांगी रास्ते पर चलता हुआ ऐसे भीषण संकट में उलझ गया है जहां से कुशल - २ बच निकलना असम्भव सा हो गया है। परम दयाल जी महाराज ने तो स्पष्ट शब्दों में चेतावनी दे दी है कि 'ऐ मानव! तू अपने किये हुए कुसंकल्पों और कर्मों के दुष्परिणामों से बच नहीं सकता।

तबाही तुझे आयेगी - आयेगी और जरूर आयेगी।' किन्तु करोड़ों माताओं के वात्सल्यपूर्ण दिलों के तन्तुओं से बना हुआ सन्त सद्गुरु का सहज-परोपकारी दिल मानव को संकट-तबाहियों में घिरा देखकर द्रवित हो जाता है। परम दयाल जी महाराज ने दर्दभरे दिल से संकटापन्न मानव को सर्वनाश से उबारने का शिव-संकल्प लेकर काम किया और मानव के कल्याण के लिए "मानवता" का मार्ग दिया। पर अपना बूढ़ा-थका शरीर देखते हुए उन्हें एक ऐसे परममानव की तलाश हुई जो उनकी जगह लेकर उनके लक्ष्य को पूरा करे और मानवमात्र के आसन्न-संकट का सच्चा समाधान प्रस्तुत कर मानव और मानवता को सर्वनाश से बचावे।

मनुष्य की सहज-समन्वित त्रिगुणात्मिका प्रवृति के बीच आई हुई घोर विषमता और भेदभाव ही मानव का घोर संकट और इस युग की प्रमुख समस्या है। आज मनुष्य के कर्म, ज्ञान और भक्ति में कोई सामञ्जस्य नहीं रह गया है। मानव के सत्, रज और तम के बीच घनघोर संग्राम छिड़ा हुआ है। मनुष्य अपना ही घोर शत्रु हो रहा है। आज विज्ञान, दर्शन और अध्यात्म के बीच परस्पर उदासीनता का जो फासला पड़ गया है, विसम्पर्क की जो खाई खुद गई है, उसे पाटना होगा। इनके बीच सुमधुर सामंजस्य और समरसता लानी होगी। तभी विश्व-मानव का रोग-ग्रस्त शरीर, मोह-ग्रस्त मानस और उन्माद-ग्रस्त आत्मा स्वस्थ, सबल और उल्लसित होकर अपनी जीवनयात्रा पूरी कर, मंजिल पर पहुंच सकेगा।

यदि ध्यानपूर्वक दृष्टि दौड़ाकर देखा जाये तो परम संत परम मानव हजूर मानव दयाल जी महाराज (डा० ईश्वर चन्द्र

शर्मा साहिब बहादुर) के अतिरिक्त कोई भी ऐसी हस्ती दिखाई नहीं देती जो इस युगनिर्माणकारी महान् कार्य को सम्पन्न करने की सामर्थ्य रखता हो। हजूर मानव दयाल जी महाराज अपनी अविराम अनवरत विश्व-यात्राओं के दौरान देश-विदेश के वैज्ञानिक, दार्शनिक एवं आध्यात्मिक संस्थानों द्वारा आयोजित सम्मेलनों के निमन्त्रण पर सहर्ष सम्मिलित होकर अपने सारगर्भित, मर्मस्पर्शी प्रवचनों द्वारा आज की खंडित मानवता की बिखरी हुई आध्यात्मिक, चिन्तात्मक एवं विश्लेषणात्मक परस्पर प्रतिद्वन्द्वी प्रवृत्तियों को उद्बोधित कर, मानवमात्र को प्रेम और एकता के सुवर्ण-सूत्र में बाँध कर विश्व-मानवता की अमर ज्योति जलाते रहते हैं और यही कारण है कि परम दयाल जी महाराज ने अपनी त्रिकालदर्शी, ब्रह्मांडव्यापी दृष्टि से पूरी तरह निरख-परख कर उन्हें ही अपना आध्यात्मिक उत्तराधिकार सौंपा। अगर हजूर मानव दयाल जी महाराज से बढ़कर शानदार कोई और व्यक्तित्व उन्हें इस धरती पर नजर आता तो वे इन्हें ही क्यों चुनते ? किसी और को क्यों नहीं चुना? अतः यह निर्विवाद है कि हजूर महाराज जी से बढ़कर शानदार व्यक्तित्व जमाने में कोई दूसरा न था, तभी परम दयाल जी महाराज ने इन्हें अपना जाँनशीन चुना और तभी मैं भी यह प्यारा कलाम बारम्बार दुहराने को विवश होता हूं क्योंकि इसमें हजूर मानव दयाल जी महाराज के प्रति परम दयाल जी महाराज के दिल की आवाज है :—

'गये दोनों जहान नजर से गुजर ।
तेरो शान का कोई बशर न मिला ।।
देखी हर जगह तेरी निराली फबन ।
तेरा भेद किसी को मगर न मिला ।।

तेरे रहने का कोई मकान भी है !
तेरे मिलने का कोई निशान भी है !
तुझे देखा इधर तो इधर न मिला।
तुझे ढूंढ़ा उधर तो उधर न मिला ॥
कहीं दस्ते सवाल दराज़ नहीं ।
किसी और पै यूं मुझे नाज़ नहीं ॥
कोई तुझ सा गरीबनवाज़ नहीं ।
तेरे दर के सिवा कोई दर न मिला ॥

अनामी धाम से परम दयाल जी महाराज जो रूहानी हीरे-मोती हम धरती के जीवों के लिए अपनी मुट्ठी में बन्द कर लाये थे वो मुट्ठी बन्द की बन्द रह जाती और वे हीरे-मोती उनके साथ ही अनामी धाम को वापस चले जाते, अगर कहीं हजूर मानव दयाल जी महाराज उन्हें न मिले होते। कोटि-कोटि धन्यवाद और अरब-खरब दण्डवत् है मुअल्ला मुकद्दस हजूर मानव दयाल जी महाराज के कमल-चरणों में जिन्होंने परमदयाल जी महाराज की मुट्ठी के हीरे-मोती बखूबी सम्हाल लिये और हम अबोध जीवों के लिए अपने सत्संगों में उन्हें सदा बिखेरते रहते हैं।

सेवकों में निम्नतम

शब्दानन्द

❀❀
❀

होशियारपुर।
25-10-87

मेरी अपनी ही आत्मा के अंश परम प्रिय मदन गोपाल
राधास्वामी परम दयाल जी सहाई !

आपका 19 अक्टूबर का पत्र मिला। ऐसे लगता है कि आपको परमसन्त परम दयाल पं० फकीर चन्द जी महाराज के अगस्त मास के छपे हुए सत्संग के पढ़ने से ग़लतफहमी हो गई है। असल में उन्होंने एक सच्चाई बयान की है और वो यह है कि भोले-भाले सत्संगी इस ग़लतफहमी में पड़े हुए हैं कि गुरु का शरीर उनकी सहायता करता है। इसी भुलावे में, वे सत्संगी उनके डेरों को पनपाने के लिए और कई बार उनके सम्बधियों को भी अनावश्यक पैसा देते हैं। यदि कोई व्यक्ति गुरु के शरीर, उसके मन और उसकी आत्मा से परे उसके परमतत्त्व से प्यार करे, तो उसके सच्चे प्यार से उसे यह ज्ञान हो जायेगा कि गुरु की व्यापकता क्या है ? अज्ञानी और भावुक सत्संगी उस समय बड़ी भारी भूल करता है, जब वह किसी विशेष नाम वाले व्यक्ति को, कबीर साहिब को, राधास्वामी दयाल को, सालिगराम जी महाराज को, दाता दयाल जी महाराज को, सावन सिंह जी महाराज को, फकीर चन्द जी महाराज को या कृपाल सिंह जी महाराज को अलग हस्ती मानकर उसे जग में व्यापक समझता है। ऐसा करने से वह उसके स्थूल शरीर को, उसकी मानसिक प्रवृत्तियों को, उसके डेरे को, उसकी तनखा को, गुरु की विशेषताएँ मान रहा है। गुरु तो गुरु है, परमतत्त्व है और

सत् है। वह इन सब हस्तियों में और तुम्हारे में व्यापक है। जब ज्ञानदाता देहधारी गुरु सत्संगी के इस भ्रम को मिटाने की बजाय पनपा रहा है, तो यह कहा जा सकता है कि वह एक अलग व्यक्ति के रूप में मानसिक स्तर पर उसे ठग रहा है और अपने आपको भी ठग रहा है :—

गुरु किया है देह को सतगुरु चीन्हा नाहिं।
कहें कबीर ता दास को तीन ताप भरमाहिं।।

परम दयाल जी महाराज ने इस सच्चाई को फैलाने के लिए सावन सिंह जी महाराज को सत्पुरुष मानकर उनका आशीर्वाद लिया था। हम किसी की निन्दा नहीं करते। आप के अन्दर भी परमतत्त्व को हाजिर-नाजिर मानते हैं। शेष आपके पत्र आने पर, हार्दिक आशीर्वाद और राधास्वामी!

आपका फकीरमय
मानव

महत्त्वपूर्ण सूचना

मानव मन्दिर पत्रिका गत 25 वर्षों से सारे विश्व में मानवमात्र की सेवा करती आ रही है। इसके पाठकों की संख्या अत्यधिक बढ़ गई है। प्राय: सभी पाठकों को यह मालूम है कि हम अपने पाठकों से इस पत्रिका का कोई मूल्य या डाक-खर्च तक नहीं लेते हैं। इस पत्रिका की माँग व लोक-प्रियता इसलिए बढ़ती जा रही है क्योंकि इसको हरएक पढ़ने वाला यह भली-भाँति महसूस करता है कि इसमें प्रकाशित सच्चाई, परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व के कल्याण के लिए उनका आध्याष्मिक उत्थान करती है।

छपाई के खर्च की महंगाई आकाश छूने लगी है, साथ

ही पाठकों की बढ़ती संख्या और विदेशी डाक-दर में वृद्धि के कारण हमारा डाक-व्यय भी अत्यधिक बढ़ गया है। यदि पाठकगण महसूस करते हैं कि आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शन के इस निःशुल्क उपहार का प्रकाशन, प्रेमी पाठकों की बढ़ती संख्या के बावजूद, ज़ारी रखना उपयोगी है तो यह उचित होगा कि प्रत्येक पाठक इस उत्तम कार्य में आर्थिक सहयोग करें और अपना अंशदान बैंक ड्राफ्ट, चेक या मनी आर्डर द्वारा सेक्रेटरी, मानवता मन्दिर होशियारपुर के नाम भेजें।

मानवता मन्दिर, प्रकाशन के अलावा, निःशुल्क चिकित्सालय (होम्योपैथिक तथा एलोपैथिक दोनों) के साथ ही एक दाँत का अस्पताल तथा शिव देव राव माध्यमिक शिशु शिक्षा केन्द्र के संचालन द्वारा बच्चों के जीवन में मानवता के आदर्श की शिक्षा-दीक्षा के जरिये होशियारपुर निवासियों की सेवा कर रहा है। निर्धन बच्चों को आर्थिक सहायता भी दी जाती है। दानी महानुभावों द्वारा मानव मन्दिर प्रकाशन की सहायता की भाँति ही इन सेवा-कार्यों को भी भरपूर प्रोत्साहन देना चाहिए।

के० एम० परदेशी
प्रेसिडेण्ट

-आवश्यक सूचना-

सत्संगियों को एक बार फिर सूचित किया जाता है कि वे अपने पत्र के साथ अपना पता लिखा हुआ टिकट लगा हुआ लिफाफा या अन्तर्देशीय पत्र अवश्य भेजें। जो ऐसा नहीं करेंगे उन्हें पत्रोत्तर की आशा नहीं करनी चाहिए।

जब महाराज जी दौरे पर होते हैं उन दिनों में सत्संगीजन कृपया पत्र न लिखा करें, क्योंकि जब ढेरों सारी डाक

इकट्ठी हो जाती है तो उनका जवाब देना नामुमकिन हो जाता है ।

एस. एल. सेठी

जनरल सेक्रेटरी

-आवश्यक सूचना-

सत्संगियों को सूचित किया जाता है कि जिन लोगों के पूरे पैसे प्राप्त हो चुके है उनके नाम मानवधाम में जल्दीं ही प्लॉट अलाट होजायेंगे। आर्कीटेक्ट द्वारा नक्शा बनाया जा रहा है, जो जनवरी 1988 तक बनकर तैयार हो जायेगा । उसकी सूचना आपको दे दी जायेगी ।

कुछ लोगों के प्लॉटों के प्रार्थनापत्र रह गये हैं। उनके तथा नये प्लॉट के प्रार्थियों के लिए और भी जमीन खरीदने का प्रयत्न किया जारहा है। जो लोग प्लॉट खरीदना चाहते हैं, वे श्री ऋषि प्रकाश गुप्ता, सेक्रेटरी अन्तर्राष्ट्रीय मानवता संस्थान, दिल्ली के साथ निम्न पते पर पत्राचार करें :—

श्री ऋषि प्रकाश गुप्ता,
O-41, विजय विहार, उत्तम नगर,
नई दिल्ली-110059.

एस. एल. सेठी,
जनरल सेक्रेटरी
मानवता मन्दिर,
होशियारपुर (पंजाब)

-महत्त्वपूर्ण सूचना-

जैसा कि सत्संगीजन को सूचित किया जा चुका है कि प्रति वर्ष की तरह इस वर्ष भी परमसन्त परम दयाल पं० फकीर चन्द जी महाराच की 101 वीं जन्म-जयन्ती आगामी 18 नवम्बर 1987 को मानवता मन्दिर, होशियारपुर में तथा रविवार 22 नवम्वर 1987 को सलवान पब्लिक स्कूल, ओल्ड राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली में अति धूमधाम से मनाई जायेगी। इस शुभ अवसर पर जयपुर के श्रेष्ठतम मूर्तिकार द्वारा बनवाई गई, परम दयाल जी महाराज की परममोहिनी प्राकृतिक रंगों वाली संगमरमर की प्रतिमा (मूर्ति) का अनावरण तथा दर्शन-लाभ होगा। इस भव्य मूर्ति की प्रतिष्ठापना, परमसन्त हजूर मानव दयाल जी महाराज के कर-कमलों द्वारा आगामी वैशाखी पर्व पर मानवता मन्दिर, होशियारपुर में सम्पन्न होगी। इसके योग्य भव्य भवन का निर्माण कराया जा रहा है, जिस पर बहुत धन व्यय होगा। इस महान् कार्य में जो सत्संगी भाई-बहन आर्थिक सहयोग देना चाहते हैं उनका अंश-दान सहर्ष स्वीकार किया जायेगा।

सभी सत्संगी भाई-बहनों से निवेदन है कि 18 नबम्वर बुधवार को प्रात: 9 बजे से 12 तक होशियारपुर में तथा 22 नबम्वर 87 रविवार को प्रात: 9 बजे से 12 बजे तक सलवान पब्लिक स्कूल, ओल्ड राजेन्द्र नगर नई दिल्ली में होने वाले दोनों सत्संगों में अवश्य पधारें और स्वयं को लाभान्वित करें।

एस. एल. सेठी,
जनरल सेक्रेटरी

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

(पत्र-प्रतिलिपि श्रीमती बसन्ती देवी, हापुड़)

हापुड़

मेरे प्यारे पिता परम पुरुष पूर्णधनी राधास्वामी !
आपके कमल-चरणों में लाखों प्रणाम ।

पिता जी , आपको मैं अपना कुछ अनुभव लिख रही हूं। एक तो यह कि मैं 10 साल से बराबर समाधि पर बैठती हुं और इस बीच बहुत खेल-तमाशों को देखती हूं। अब एक ऐसा प्रकाश अनुभव होता है कि जी चाहता है उसे देखती ही रहूं और बहुत अच्छा लगता है। प्रकाश भी कई प्रकार का होता है। मैं ग़लती पर थी कि हंस भी कोई आदमी के रूप में होंगे लेकिन साधन के परिश्रम से पता चल गया कि वह भी प्रकाश ही है लेकिन अलग है। कुछ आवाज़ों का भी अनुभव हुआ। कभी ऐसी कि जैसे कोई नगाड़ा बजने और बहुत तेज हवा चलने की आवाज हो रही है। कभी ऐसा लगता जैसे मेरे सिर के अन्दर बीन सी और कोई आवाज होती है। अब मेरी हालत ऐसी हो जाती है जैसे कि नींद आ रही हो, लेकिन नींद नहीं बहुत अच्छा नशा होता है, आँखें खोलने पर भी नहीं खुलती हैं। पिता जी, यह कैसा नशा है ? मैं इसको क्या कह सकती हूं। मैं तो आपकी एक अनजान बालिका हूं। मुझे यह बता दो महा-राज, यह अनुभव कैसा है ! कहीं मैं ग़लती पर तो नहीं ? मेरा रास्ता ग़लत तो नहीं ? कहीं मैं धोखे में तो नहीं हुं ? मुझे सही रास्ता बताना पिता जी, मेरा पत्र रद्दी में नहीं डालना। जबाव देना मेरे प्यारे पिता जी।

अब से 10 दिन पहले मैं आप का सत्संग कहीं सपने में सुन रही थी तो आप ने कहा कि यहाँ पर एक मीरा भी तो है ! पिता जी, मैं पूरी संगत के सामने बहुत नाची और यह शब्द बोली थी । यह मुझे याद रहा और नोट कर लिया :—

शब्द

मैं तो मीरा बन के रहूंगी ।
सतगुरु को अपने रिझा के रहूंगी ॥
रूठे गुरु को मना के रहूँगी ।
प्रीतम को अपने हँसा के रहूंगी ॥
गगन मंडल में पड़ा हिंडोला;
सुरत को अपनी झुला के रहूंगी ॥
ज्योति निरंजन के दर्शन करूंगी;
घंटा शंख मृदंग सुनूंगी ।
बादल की गर्जन सुनके रहूंगी ॥
सुन्न भी देखूं महासुन्न भी देखूं ।
मानसरोवर नहा के रहूंगी ।
दशम द्वार मैं जाके रहूंगी ॥
भँवर पार कर सतपुर पहुँचूं ।
सतपुरुष का दर्शन कर के;
अलख अगम पार जा के रहूंगी ॥
वहाँ बैठे मेरे प्यारे राधास्वामी ।
वो मेरी आँखों के तारे ;
चरणों में उन के समा के रहूंगी ॥

प्यारे का दीदार करूंगी ;
आवागमन मिटा के रहूँगी ।।

महाराज जी, यह मेरी आत्मा का लिखा शब्द है। मैं कहीं भ्रम में तो नहीं हूं ? मेरा भ्रम मिटा देना। ऐ सद्-गुरु पिता और मेरे मालिक, मैं मेरे चरणों पर हरदम कुरबान।

आपके चरणों की दासी
बसन्ती देवी

पत्र द्वारा सत्संग

(उत्तर परम सन्त हजूर मानव दयाल जी महाराज)

मानवता मन्दिर,
होशियापुर।
6-8-87

मेरी प्यारी बेटी बसन्ती देवी,

राधास्वामी परम दयाल जी सहाई।

आपका अनुभवपूर्ण पत्र मिला। आप के पूर्व जन्म के संस्कार बहुत ही अच्छे हैं। जो अनुभव आपको हो रहे हैं, वो बिलकुल ठीक हैं और दूसरों को ये अनुभव काफी समय के बाद होते हैं। आप के संस्कारों के कारण और आप की श्रद्धा और विश्वास के कारण आप की आन्तरिक उन्नति बहुत जल्दी हो रही है। जो सूक्ष्म आवाज पहले हवा की सायँ-२ की भाँति होती है और बाद में वीणा की आवाज में बदल जाती है. उसका मतलब यह है कि आप भँवरगुफा को पार करके सत्तलोक में प्रवेश कर चुकी हैं। लेकिन आप को जो भिन्न प्रकार के प्रकाश दिखाई देते हैं वे सब मिल

सफेद प्रकाश में बदल जायेंगे। उस समय आपको सद्गुरु का प्रकाश वाला रूप भी दिखाई दे सकता है उसके बाद ही अलख का अनुभव होगा, जिसमें शब्द अधिक और प्रकाश कम होता है। अलख के बाद अगम देश में प्रवेश करोगी जिसमें केवल शब्द होता है। अन्त में अनामी दयाल से मेल होगा।

तुम्हारे अनुभव से यह लगता है कि तुम कभी-२ बिना सत्, अलख और अगम के अनुभव के भी थोड़े समय के लिए अन्तर में दयाल से स्पर्श कर लेती हो। इसलिए तुम्हें मस्ती का अनुभव होता है और आँखें खोलने को मन नहीं करता। अभ्यास करती रहो और सहज में ही तुम्हें शान्ति का अनुभव होगा।

तुम्हारा लिखा हुआ शब्द बुद्धि से नहीं लिखा गया वह सुरत की प्रेरणा से लिखा गया है। अगर तुम्हारी आन्तरिक उन्नति ऐसी ही होती रही तो तुम्हारी चेतना की अवस्था भी ऊँची हो जायेगी। किन्तु कभी भी इस बात का अहंकार नहीं होना चाहिए कि तुम कुछ बन गई हो। अभी तुम्हें सत्संगों की जरूरत है। इसलिए परम दयाल जी के और मेरे सत्संग पढ़ा करो।

आपको और आपके परिवार को हार्दिक आशीर्वाद और राधास्वामी !

आपका फकीरमय

मानव

पत्र द्वारा सत्संग

प्यारी बेटी नीरजा,

राधास्वामी परम दयाल जी सहाई !

आपने मेरे सत्संग अच्छी तरह से नहीं पढ़े हैं। कर्म तीन प्रकार के होते हैं - (1) संचित कर्म (2) प्रारब्ध कर्म और क्रियमाण कर्म। संचित कर्म पिछले हजारों जन्मों के कर्मों का भण्डार हैं जो इकट्ठे हो चुके हैं और जिनका फल व्यक्ति को अगले हजारों जन्मों में मिलेगा।

प्रारब्ध कर्म वे संचित कर्मों से चुने हुए कर्म हैं जो हमने पूर्व जन्मों में किये थे और जो सब हमें इसी जन्म में भोगने हैं। इन्हीं कर्मों को अनिवार्य माना जाता है, जिस पर मनुष्य का कोई अधिकार नहीं। वशिष्ठ ने दुःखी भरत को यही कहा था :—

सुनहु भरत भावी प्रबल, बिलख कहेउ मुनि नाथ।
हानि लाभ जीवन मरण, यश अपयश विधि हाथ ॥

क्रियमाण कर्म हमारे वे नये कर्म हैं जिन्हें हम अपने संकल्प के द्वारा जानबूझ कर करते हैं और जिनका संचित कर्मों से और प्रारब्ध कर्मों से प्रभावित होने का कोई सम्बन्ध नहीं है। मिसाल के तौर पर 'शिवसंकल्प' पर चलना या न चलना प्यार को स्वीकार करके जीवन बिताना या नफरत करना, सद्‌गुरु के वचनों के अनुसार चलना या उसके आदेश को ठुकरा देना। क्रियमाण कर्म इस बात को साबित करता है कि हम परमतत्त्व ईश्वर के अंश हैं। जैसे ईश्वर अपनी संकल्प की शक्ति से सृष्टि रचता है, उसका पोषण करता है और उसका विनाश करता है, वैसे ही हम शिवसंकल्प पर चलकर अपने संचित कर्मों को नष्ट कर सकते हैं, भविष्य के कर्म समाप्त कर सकते हैं और प्रारब्ध कर्मों को आसानी से भोग

कर, परमनत्त्व में विलीन होकर, स्वयं परमतत्त्व बन सकते हैं। केवल प्रारब्ध कर्मों को ही ईश्वर की मर्जी कहते हैं जिसके बिना पत्ता नहीं हिलता। किन्तु यह प्रारब्ध कर्म भी तो हमने खुद ही पिछले जन्मों में अपने संकल्प से किये थे। हम खुद ही वह ईश्वर हैं जिसने संचित कर्म इकठ्ठे किये, प्रारब्ध कर्म किये और शिवसंकल्प किया। दिली आशीर्वाद और राधास्वामी !

आपका फकीरमय
मानव

परम सन्त हजूर मानव दयाल डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज का दिसम्बर 1987 का टूर प्रोग्राम

6-12-87	प्रातः देहली से बम्बई के लिए प्रस्थान।
6-12-87 से 10-12-87 तक	बम्बई में विश्राम श्रीमती निर्मला पंडित, 3 मात्री छाया जुहू स्कीम बम्बई। टैलीफोन नं० 620124
10-12-87	प्रातः वम्बई से मद्रास के लिए प्रस्थान।
10-12-87 से 11-12-87 तक	मद्रास में विश्राम।
12-12-87	प्रातः मद्रास से (वाया सिकन्द्राबाद) दिल्ली के लिए प्रस्थान।

ING BOOKS CAN BE HAD FROM
.ANAVTA MANDIR LIBRARY,
HOSHIARPUR (Pb.)

1. Truth Always Wins
2. Nam Dan
3. A Word to Americans
4. Autobiography of a Faqir
5. A Broad on Reality
6. Key to Freedom
7. Know Thyself
8. Realisation of the Reality
9. The Science of God Realisation
10. The Art of Happy Living
11. Jeewan Mukti
12. Republic Day Message (?6-1-1981)
13. Message on Independence Day
14. Radha Swami Dayal's 'Divine Message'
15. Weight of Soul
16. Religious Research
17. The Law of Causation in Nature and Man
    Grounded on God - The Ultimate being.
    Paper by Dr. I. C. Sharma Seoul, South korea
18. A Word to Canadians

हिन्दी

1. गुलिस्ताने हजार रंग
2. शिव शब्द सागर भाग 1
3. ,, ,, ,, भाग 2
4. अनुभव का निष्कर्ष, मानवता
5. दाता दयाल पराभक्ति मार्ग
6. प्रेम रहस्य
7. नवविवाहितों को उपदेश
...र अर्थात् मालिके-
...ं नहीं रहता
...रुष फकीर वावा

पंजावी

1. पंज नाम दी विज्ञानिक व्याख्या
2. पूर्ण विवेक
3. जीवन दा भेद

वन्दनम्

चरण शरण को वन्दना, नित कोई और न काम ।
गुरु बसो चित आय मेरे, बख्श दो निज नाम ।।
तेरी शरणागत हुआ फिर, किसकी राखूँ आस ।
आस तो तेरी दया की, जग से रहूँ उदास ।।
रूप ध्याऊँ, नाम गाऊँ, शब्द राता मन ।
आठों याम तेरा ही सुमिरन, भाग मेरा धन ।।
सीस पर निज कर कमल धर लिया चरण लगाय ।
पतित पापी तर गया, गुरु शरण तेरी आय ।।
मुक्ति की नहीं चाह मन में, भक्ति प्यारी लाग ।
राधास्वामी की दया से, भाग पूरन जाग ।।

---

(1) -अत्यन्त आवश्यक सूचना-

आपको हर्ष होगा कि मानवधाम में लगभग 30 और प्लॉट की भूमि मिल रही है। भूमि की कीमत हर दिन बढ़ रही है इसलिए अब जिन लोगों को प्लॉट खरीदना है 250 गज की कीमत चालीस हज़ार रुपये होगी। क्योंकि प्लॉट बहुत कम हैं इसलिए जो लोग अभी भी प्लॉट लेना चाहें वह जल्दी से जल्दी गुप्ता जी को बीस हजार रु. का ड्राफ्ट तुरन्त भेज दें और बाकी बीस हज़ार 15-3-1988 तक देना होगा जो सत्संगी सारा पैसा एक मुश्त में तुरन्त भेज दें, हम उनके आभारी होंगे और उन्हें एक हजार रुपये की छूट दी जायेगी।

(2) सभी सत्संगियों को सूचित किया जाता है कि परम सन्त हज़ूर मानव दयाल जी महाराज का महाराष्ट्र और आन्ध्र प्रदेश का दौरा जनवरी 1988 के तीसरे सप्ताह से आरम्भ होगा। दौरे की तारीखें जनवरी 1988 के मानव मन्दिर में प्रकाशित कर दी जायेंगी।

एस. एल. सेठी, जनरल सेक्रेटरी
मानवता मन्दिर, होशियारपुर।

B Dhar

6265/74 Nov. 10th 1987
dir NWHSP—7

Res 42627
Res: 42627

Address Shop 43030
43030
40560 40560

To

5198. Eng. Sh. C. Bhupander-
-Das , Area Manager
(France- Indian)
H. No. 22.5.182.
Pattalwadi
Lane Gulzar Hauz
Hyderabad-500002.(A.P)

Phone 2022

From :

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR-146001.

Dev Rao Press, Manavta Mandir, Hoshiarpur (Pb.)